स्वाभिमान मार्तण्ड महाराणा प्रताप

(ऐतिहासिक नाटक)

लेखक : डॉ. लालताप्रसाद सक्सेना 'ललित'

स्वाभिमान मार्त्तण्ड महाराणा प्रताप

(ऐतिहासिक नाटक)

लेखक

डॉ० लालताप्रसाद सक्सेना 'ललित'

एम.ए., पी–एच.डी., डी.लिट्.

पूर्व–आचार्य–अध्यक्ष

हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय

जयपुर पब्लिशिंग हाउस

एस. एम. एस. हाईवे, जयपुर–302003

प्रकाशक :
रामचन्द्र अग्रवाल
जयपुर पब्लिशिंग हाउस
एस. एम. एस. हाईवे जयपुर-3
☎ 319198, 319094 (O)
512152 (R)

© लेखकाधीन

प्रथम संस्करण 1995

मूल्य : 20.00

लेसरटाइपसेटर्स :
कम्प्यु प्रिण्ट्स
जयपुर
☎ 323496 (O)

मुद्रक :
ग्राफिक ऑफसेट प्रेस
जयपुर

दृष्टिकोण

प्रताप ! सीसोदिया वंश-भास्कर प्रताप !! स्वाभिमान-मार्त्तण्ड प्रताप !!! भारतमाता के लाड़ले प्र..प !!!! कौन कह सकता है कि तुम इस संसार में नहीं हो? मैं तो तुम्हारी उपस्थिति प्रतिपल, प्रतिक्षण अनुभव करता हूँ। मैं ही क्या, सारा संसार तुम्हारी अपरिमेय महत्ता से परिचित है; तुम्हारी महिमा की भूरि-भूरि प्रशंसा करके उसका शंखनाद करता है; नर-नारी, बाल-वृद्ध तुम्हारी ओजस्विता से पूर्त है; नर, नाग, किन्नर, गन्धर्व, यक्ष आदि ही नहीं, स्वयं देवता भी तुम्हारे त्याग, तपस्या, कूटनीति, बुद्धिमत्ता, शक्ति, साहस, निर्भीकता, देश-प्रेम, पराक्रम और वीरता से अभिभूत हैं।

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की व्यावहारिक महत्ता का पाठ पढ़ाने वाले हे राष्ट्रभक्त ! मृत व्यक्ति में भी प्राणों का संचार करने वाले हे महाप्राण !! देशभक्तों में शक्ति, साहस एवं शौर्य का शंख फूँकने वाले हे स्वातन्त्र्य सूर्य !!! तुम्हारी महिमा का गान कर सकने की इस दुर्बल लेखनी क्षमता कहाँ ? हे शक्तिदूत ! तुम अपने जैसे आप हो, तुम्हारी कोई उपमा नहीं, कोई सानी नहीं। तुम न्य हो। तुम्हें पाकर भारतमाता कृतकृत्य है, तुम्हें अपने क्रोड में खिलाकर राजस्थान की वीर-भूमि र्णकाम और वसुन्धरा आनन्द-गद्‌गद। बाल्यावस्था से ही तुम मेरी रग-रग में समाए हो, मेरे जीवन दिशा-निर्देशक हो, आदर्श हो। हे पुण्यात्मन् ! तुम्हारा यशोगान करके लेखनी पवित्र हो जाती है, म्हारा सामगान करके व्यक्ति पूर्णकाम हो जाता है और उसका जीवन धन्य। हे तपोपूत ! तुम्हारी दिग्दिगन्त-व्यापिनी महिमा अपनी जैसी आप ही है।

आँखें खुलीं तो स्वप्नलोक से यथार्थ की दुनिया में आ गया। खेद हुआ यह जानकर कि आनन्द का संसार लुप्त हो गया और स्वाभिमान-मार्त्तण्ड महाराणा प्रताप का दिव्य व्यक्तित्व अन्तर्धान। वस्तुतः, गत रात्रि महाराणा प्रताप की महत्ता का निरन्तर चिन्तन करता रहा। तभी न जाने कब निद्रा देवी ने आ घेरा और मैं स्वप्न-संसार में न जाने कहाँ खो गया। कहना न होगा कि महाराणा प्रताप का मैं उस समय से भक्त हूँ जब से मैंने होश सम्भाला। उनका चित्र मात्र ही मेरी रग-रग में श्रद्धा-भक्ति एवं ओजस्विता की स्फूर्ति भर देता है। उनकी महत्ता का कौन क़ायल नहीं? उनका नामसमरण ही

स्वतन्त्रता-सेनानियों में अपने देश की एक-एक इंच भूमि के लिए मर मिटने की अमर प्रेरणा देता है। उनकी यशोगाथा राजस्थान अथवा भारतवर्ष ही नहीं, समस्त संसार के स्वनामधन्य वीरों के लिए आदर्श है। भगवान् एकलिंग के उपासक, देवाधिदेव महादेव के परमभक्त हे अनन्य वीर! मेरी यह तुच्छ श्रद्धांजलि भी स्वीकार करो, मेरी लेखनी की जीवनी में अपनी राष्ट्र भक्ति की संजीवनी-शक्ति का संचार करो, स्वाधीनता की परमौषध के महामंत्र का शंख फूँको और उसे गति दो; गति ही नहीं, ऐसी निर्बाध गति जिसमें कहीं कोई व्यवधान अथवा विराम न हो।

हे स्वातन्त्र्य-केसरी! इस देश की प्रकृति, राजस्थान की वीर-भूमि और उसका एक-एक अणु-परमाणु तुम्हारा ऋणी है, तुम्हारे प्राणों के स्पन्दन से अनुप्राणित है, तुम्हारे परम अनुकरणीय स्वातन्त्र्य-प्रेम से स्फूर्त है। मेवाड़ के महाड़; उसकी कँकरीली पथरीली पगडण्डियाँ; सरिताएँ, सरोवर और उसके रेतीले स्थल; उसके पेड़-पौधे और वनस्पतियाँ; उसके पत्र-पुष्प, कन्द-मूल और फल; ग्रीष्म का ताप और शीत की ठिठुरन; उसकी उपत्यकाएँ, गुफ़ाएँ-कन्दराएँ, शैल-श्रेणियाँ और चोटियाँ सभी स्मरणीय हैं। उनका विस्मरण सम्भव नहीं। उसके एक-एक अणु-परमाणु पर अंकित है स्वाभिमान-मार्त्तण्ड महाराणा प्रताप का नाम; उसकी एक-एक इंच भूमि पर अंकित है उनके साहस-शौर्य-पराक्रम और त्याग की गाथा; उसके शैल-शृंगों में गूँजते हैं उनके व्यक्तित्व की महत्ता के गौरव-गान। इसीलिए वह प्रणम्य है सारे संसार के लिए। देवता भी उसे प्रणाम करके अपना जीवन धन्य मानते हैं।

इतिहास कहता है कि ऐसा ही था। पर कौन जाने वह कितना प्रामाणिक है? जहाँ महान् अकबर के आतंक का बोलबाला हो, उसके दम्भ और दबदबे की तूती बोलती हो, उसके टेढ़ी निगाह—उसकी वक्र दृष्टि अथवा बंकिम भ्रकुटि—ही बड़े-से-बड़े व्यक्ति की मौत के पैग़ाम का पर्याय हो, वहाँ उसके अपने किसी अधीनस्थ दरबारी में यह साहस कहाँ कि वह उसके विरोधी की प्रशंसा करे। अत: अबुलफ़ज़ल की 'आइने अकबरी' और 'अकबरनामा' में ऐतिहासिक सत्य खोजना व्यर्थ है। यही नहीं, अन्य ग्रन्थों की ऐतिहासिकता भी शंकाओं से परे नहीं है, क्योंकि अकबर का दबदबा समग्र भारत में था; उसका आतंक सर्वव्यापी था। किन्तु मेवाड़ और उसके महाराणा इसके अपवाद थे और फिर महाराणा

प्रताप का तो कोई सानी ही न था, उनकी कोई उपमा न थी। आज भी वे अनुपमेय हैं, अपने जैसे आप हैं; इस देश में ही नहीं, समग्र विश्व में।

चाहता था कि प्रताप पर एक महाकाव्य लिखता, एक विशाल महाकाव्य। किन्तु समय की सीमाओं ने लेखनी की लगाम मोड़ दी। फलत:, मार्ग बदलना पड़ा। उचित भी थाइसलिए कि व्यक्ति आज अत्यधिक व्यस्त है। पाठक-श्रोता के पास अब इतना समय कहाँ कि वह किसी महाकाव्य का पोथा पढ़ सके! अब तो वह कम-से-कम समय में अधिकाधिक मन:प्रसादन के साथ कोई उपलब्धि—अपनी जीवन-यात्रा के लिए कुछ सम्बल—चाहता है। अत: लेखक-साहित्यकार का कर्तव्य है कि वह उसकी परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित करके, उसके मनोनुकूल ऐसी रचना करे जिससे उसका वांछित मनोरंजन एवं मार्ग-दर्शन हो। साथ ही, उससे उसे अपनी जीवन-यात्रा के लिए उपयुक्त पाथेय भी मिल सके। इसीलिए मैंने यह नाटक, पाठक-श्रोताओं एवं दर्शकों को इस अनन्य महापुरुष के जीवनोद्देश्य की किंचित् जानकारी देने के लिए, मन:प्रसादन के उपकरणों एवं तत्त्वों के साथ, साहित्य-देवता को समर्पित करने का संकल्प किया और मुझे प्रसन्नता है कि यह आज आपके सामने है। यह कैसा है, इसका निर्णय प्रबुद्ध पाठक-श्रेता और दर्शक-अध्येता ही कर सकते हैं। एक बात औरसाहित्य साहित्य है, नेरा इतिहास नहीं। यही नहीं, इतिहास पर आश्रित-आधारित साहित्य का भी, 'सत्यं, शिवं एवं सुन्दरम्' के सामंजस्य के कारण, अपना पृथक् अस्तित्त्व है। उसकी कल्पना-जन्य रम्यता उसे शुष्क-शुष्क ऐतिहासिक कृति से बहुत पृथक् कर देती है। इन्हीं कतिपय शब्दों के साथ, मैं उस स्वनामधन्य महापुरुष का वन्दन-अभिनन्दन करके, उसके व्यक्तित्त्व, चरित्र और कीर्त्ती की पावन त्रिवेणी में अवगाहन करने के लिए अग्रसर होता हूँ।

— लालताप्रसाद सक्सेना 'ललित',
पूर्व-आचार्य-अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
3/595, मालवीय नगर, जयपुर-302017

पात्र-परिचय

पुरुषपात्र

1. महाराणा प्रताप
2. रामसिंह तोमर—ग्वालियर नरेश
3. सोनगरा अक्षयराज—प्रताप के नाना
4. रावत कृष्णदास—देशभक्त सामन्त
5. जगमाल—प्रताप का सौतेला भाई
6. अमरसिंह—प्रताप का पुत्र
7. कर्मसिंह
8. कुलगुरु
9. चन्द्रसेन
10. शक्तिसिंह—प्रताप का छोटा भाई
11. गड़बड़सिंह—प्रताप का अन्तरंग सहचर
12. उमेद ख़ान
13. शालिवाहन
14. भवानीसिंह
15. भामाशाह
16. ताराचन्द
17. ताजख़ा
18. हकीम ख़ाँ सूरी
19. झाला बीदा
20. भीमसिंह डोडिया
21. मानसिंह
22. अब्दुलरहीम ख़ानख़ान
23. समुद्रसिंह
24. रुद्रदेव
25. सिंहदेव (सिंहा)
26. लूं ख़ाँ
27. देवराज
28. आसफ़ ख़ाँ
29. ग़ाज़ी ख़ाँ बदख़्शी
30. मीर ज़ामिन
31. रणसिंह
32. श्यामलदास
33. उग्रसेन
34. सहस्रकमल
35. ममनून ख़ाँ और गुप्तचर, प्रतिहार, सैनिक, जल्लाद आदि।

नारी पात्र

1. अजय दे
2. जयवन्ती
3. धीर बाई
4. शम्पा—अजय दे की अन्तरंग सखी
5. आशा—अजय दे की अन्तरंग सखी
6. रागिनी—अजय दे की अन्तरंग सखी
7. विजया—अजय दे की अन्तरंग सखी
8. चाँदनी—अजय दे की अन्तरंग सखी
9. शाम्भवी—अजय दे की अन्तरंग सखी
10. अंजना—अजय दे की अन्तरंग सखी
11. सल्मा
12. बेगम ख़ास
13. निगार
14. सुल्ताना
15. मतवाली—गालिब

पहला अंक

प्रथम दृश्य

स्थान : इन्द्र की सभा

समय : पूर्वाह्न

वृहस्पति : देवेन्द्र ! ग्रहों की स्थिति बड़ी विचित्र है। देवभूमि भारतवर्ष पर विपत्तियों के बादल मँडरा रहे हैं। आततायी आक्रान्ताओं की साम्राज्य-लिप्सा बढ़ती जा रही है ! उनकी सेनाओं की हलचल से देवभूमि भारत की शान्ति भंग होगी; मान-सम्मान और आन-बान एवं स्वाभिमान के धनी राजपूतों की मान-मर्यादा पर प्रहार होगा; शान्ति के पहरेदार, धर्म-मर्यादा के प्रतिष्ठाता, चारित्रिक दिव्यता के आदर्श भारतीयों को विदेशी आक्रान्ताओं के षड्यन्त्रों का सामना करना होगा।

इन्द्रदेव : तो फिर क्या आदेश है गुरुदेव ?

वृहस्पति : आदेश क्या ? भवितव्यता को कौन टाल सकता है ! होनी होकर ही रहेगी।

इन्द्रदेव : फिर भी, कुछ तो करना ही होगा। हाथ पर हाथ रखकर बैठना तो उचित नहीं।

वृहस्पति : आपको कुछ करने की आवश्यकता नहीं। करने वाला स्वयं करेगा।

इन्द्रदेव : कौन करेगा, गुरुदेव ! मेरे अतिरिक्त अन्य किसी को कुछ करने की आवश्यकता ?

वृहस्पति : आवश्यकता नहीं, यह तो उसका कर्त्तव्य है। संसार का पालन-पोषण और सिर पर मँडराने वाली विपत्तियों से उसकी रक्षा करना उसका धर्म है।

नारद : (प्रवेश करते हुए) नारायण ! नारायण ! !

देवेन्द्र : तो यही कहने आए हैं आप देवर्षि ?

नारद : नहीं, देवेन्द्र ! आप से कुछ छिपा है क्या ?

देवेन्द्र : तो फिर आपके आगमन का उद्देश्य ?

नारद : आपको अभिवादन, गुरुदेव को प्रणाम, त्रिदेवों को नमन, देवनगरी की कुशल-क्षेम और देव-सृष्टि पर दृष्टिपात।

इन्द्र : और कोई अन्य प्रयोजन ?

नारद : आप की चिन्ता का निवारण।

इन्द्र : मैं समझा नहीं, देवर्षि ! आप कहना क्या चाहते हैं?

नारद : यही कि आप चिन्ता न करें। जिस देश में स्वनामधन्य स्वाभिमान-मार्त्तण्ड महाराणा प्रताप जैसे शौर्य, साहस और ओजस्विता के साक्षात् अवतार हों, उसका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता। उसका गौरव सदैव अक्षुण्ण रहेगा। कूटनीतिक चातुर्य, धार्मिक सहिष्णुता, नियति-चक्र की अनुकूलता और भाग्य-रेखाओं एवं ग्रहों की प्रबलता और शक्ति-सामर्थ्य के बावजूद अकबर की महत्ता प्रताप के सामने टिकती नहीं। अकबर महान् है तो प्रताप उससे भी कहीं अधिक महान्।

इन्द्र : कैसे? देवर्षि ! कैसे?

नारद : यह आप स्वयं देखेंगे। नारायण ! नारायण ! ! (प्रस्थान)

इन्द्र : गुरुदेव ! बात कुछ समझ में नहीं आती। किंचित् आप ही स्पष्ट करें।

वृहस्पति : (दिव्य दृष्टि से देखते हुए) अकबर दिल्लीश्वर है तो क्या हुआ, महाराणा प्रताप सारे भारत वर्ष के हृदय-सम्राट् हैं। अकबर आक्रान्ता है, मेवाड़ के विरुद्ध ही नहीं, सारे भारतीय राष्ट्र के विरुद्ध। अपने मिथ्या अहंवाद और कट्टर पन्थियों के बहकावे में आकर, अकबर ने कई अकरणीय कृत्य किए। बन्दी हेमू की हत्या या तो उसने स्वयं की, या उसके सामने की गई। मुसलमान बनने से इनकार करने पर उसके पिता पूरणमल को मार डाला गया। इस्लाम धर्म की निन्दा करने वाले ब्राह्मण को मात्र एक काज़ी की शिकायत पर फाँसी पर लटका दिया गया। पंजाब के सूबेदार हुसेनख़ान का हिन्दुओं के प्रति अपमानजनक व्यवहार, मुसलमान बनने की शर्त पर सूरत में पकड़े गए पुर्तगालियों को जीवन-दान, कट्टरपंथियों द्वारा अनेक हिन्दुओं का धर्म-परिवर्तन और गुजरात के जैन मन्दिर तोड़ने तथा मुस्लिम अधिकारी बागाज़ीद द्वारा वाराणसी का एक मन्दिर तोड़ कर मकतब बनवाने की घटनाएँ उसके शासनकाल पर भोंड़े दाग़ हैं किन्तु समग्र भारत के हृदय-सम्राट् स्वातन्त्र्य-सूर्य महाराणा प्रताप का शासन सर्वथा निष्कलंक है। हिन्दू-मुसलमान में उसके लिए कोई भेद नहीं; सभी उनके लिए एक-से हैं, सभी उनके अन्ध-भक्त हैं और सभी उस पर अपने प्राण न्योछावर करते हैं।

नारद : (पुनः प्रवेश करते हुए) और यह बात तो आप भूल ही गए कि अकबर की उदार नीतियों के बावजूद, उसके शासन-काल में न जाने कितने हिन्दू बलात् मुसलमान बनाए गए। काँगड़ा-विजय के समय नगरकोट के मन्दिर की देवी का छत्र तीरों से

छेद दिया गया, दो सौ गायों का वध किया गया और उनका रक्त मन्दिर की दीवारों पर छिड़का गया।

वृहस्पति : हाँ, ऋषिवर ! आप ठीक कहते हैं। पर मुझे अभी और भी कुछ कहना है।

नारद : तो फिर पूरी कीजिए न गुरुदेव ! अपनी बात। नारायण ! नारायण ! !

वृहस्पति : पठान हकीम ख़ाँ सूरी उसका विश्वासपात्र ही नहीं, उसकी सेना का उच्चाधिकारी एवं उसके अग्र भाग का संचालक है। जालौर का शासक ताज ख़ाँ उसका अभिन्न मित्र है। नासिरुद्दीन को उसके दरबार के सबसे बड़े चित्रकार का पद प्राप्त है। मेवाड़-अभियान का सेनापति अब्दुल रहीम ख़ानख़ाना उसकी प्रशंसा करते थकता नहीं। अकबर का दरबारी कवि पृथ्वीराज उसकी प्रशंसा करके अपना जीवन धन्य मानता है। यही नहीं, स्वयं सम्राट् अकबर भी उसकी वीरता, शक्ति-साहस, शौर्य, स्वाभिमान तथा देश-भक्ति एवं स्वतन्त्रता का समर्थक एवं प्रशंसक है।

शिव : धन्य है, धन्य है स्वाभिमान-मार्त्तण्ड प्रताप जिसके सामने पृथ्वी का कोई वीर टिकता नहीं और जिसके पराक्रम और शौर्य की कहानियाँ सुनकर देवता भी दाँतों तले उँगली दबाते हैं।

इन्द्र : तो आप भी उसकी महिमा से अभिभूत हैं?

शिव : आप भी उससे अभिभूत हुए बना न रहेंगे।

नारद : नारायण ! नारायण ! ! (कहकर अन्तर्धान हो जाते हैं। सब धन्य-धन्य कहते हैं। इन्द्र आश्चर्य-स्तब्ध हो देखते हैं।)

परदा गिरता है।

द्वितीय-दृश्य

स्थान : शस्त्राभ्यास-शाला

समय : प्रातःकाल

रणसिंह : (तलवार चलाते हुए) बचाओ अपने को, प्रताप ! प्रमाद न करना, अन्यथा तुम्हारे प्राणों का ख़तरा है। मैं अपने को नहीं सम्भालूँगा।

प्रताप : जो आज्ञा गुरुदेव ! आप मुझ पर प्रहार कीजिए। मुझे कोई ख़तरा नहीं। मैं आश्वस्त हूँ।

रणसिंह : आश्वस्त होने से काम नहीं चलता प्रताप ! प्रयत्न अपेक्षित है।

प्रताप : (रणसिंह के खड्ग-प्रहारों से सतर्कता एवं त्वरा से बचते हुए) आपका शिष्य हूँ गुरुदेव ! इतनी शिक्षा तो मुझे आपने दे ही रखी है। और भय तो मुझ से कोसों दूर रहता है।

रणसिंह : अच्छा।

प्रताप : हाँ, इन छोटे-मोटे प्रहारों से बचना तो मेरे बाएँ हाथ का खेल है।

रणसिंह : तो अपने इन चार शत्रुओं का सामना करो।

प्रताप : (सारे शस्त्रास्त्रों से सज्जित चार शत्रुओं को देखकर) यह तो मेरी परीक्षा है गुरुदेव ! पर अब मुझे कोई भय नहीं। आपसे शस्त्राभ्यास में मुझे आपकी सुरक्षा की चिन्ता रहती है। पर अब निर्द्वन्द्व हूँ। अब आप मेरा युद्ध-कौशल देखिए।

रणसिंह : हाँ, तो करो इन चारों शत्रुओं का सामना एक साथ।

प्रताप : (चारों विपक्षियों पर बड़ी शीघ्रता से एक दृष्टि डालकर : एक के हाथ में एक भीषण भाला है; दूसरे के हाथ में एक भयंकर चमकती दुधारी तलवार; तीसरे के हाथ में एक भयंकर गदा और चौथे के हाथों में धनुष बाण। चारों चमकीले काले वस्त्रों और कवचादि से सुरक्षित हैं और चारों ही दृढ़, बलिष्ठ एवं विशालकाय।) जो आज्ञा गुरुदेव ! (प्रताप अपना भीषण भाला इतनी त्वरा से उठाता है कि भालाधारी योद्धा आतंकित हो अपने प्राण संकट में देखकर भाग खड़ा होता है। खड्गधारी व्यक्ति अपना खड्ग सम्हाले, इसके पूर्व ही प्रताप उसे अपने पाद-प्रहार द्वारा धराशायी कर देता है। गदाधारी योद्धा के हाथ से गदा गिर जाती है और धनुर्धारी के हाथ से

धनुष-बाण। पर प्रताप उन पर प्राण-घातक प्रहार न करके, उन्हें सँभलने का आदेश देता है। फिर भी, वे उसके सामने टिक नहीं पाते। तभी प्रताप पर कुछ अश्वारोही योद्धा आक्रमण करते हैं।)

एक अश्वारोही : योद्धाओ ! घेर लो इसे चारों ओर से और बाँध दो हाथी के हौदे से। बड़ा घमण्ड है इसे अपनी वीरता और शक्ति पर। रस्सों से जकड़ कर लौह-शृंखलाओं से हाथी के हौदे में बाँधकर घसीटेंगे तो छठी का दूध याद आ जायगा इसे।

दूसरा अश्वारोही : नहीं, महाराज ! यह कोई ऐसा-वैसा योद्धा नहीं, बड़ा विकट वीर है। इसके सामने कोई टिकता नहीं, बड़े-से-बड़े रण-दुर्मद और पराक्रमी योद्धा इसके सामने आते ही, दुम दबा कर भाग खड़े होते हैं।

तीसरा अश्वारोही : हाँ, महाराज ! यह कई बार बड़े-बड़े रस्सों और लौह-शृंखलाओं को तोड़ चुका है; हौदे से बाँधकर हाथियों को रोक चुका है। पेड़ों से बँधकर यह उसकी डालें-शाखाएँ तोड़ देता है; बड़े-बड़े पेड़ों को जड़ से उखाड़ लेता है।

सरदार : अच्छा, तो मैं देखता हूँ इसके कर्तृत्व का चमत्कार। अभी लेता हूँ इसकी शक्ति की परीक्षा। देखता हूँ कैसे बचते हैं बच्चू मेरे विकट प्रहारों से।

दूसरा अश्वारोही : नहीं, महाराज ! मत पड़िए इसके चक्कर में। क्या आवश्यकता है इस शेर को छेड़ने की ?

सरदार : चुप रह कायर ! तू मेरे साथ रहने योग्य नहीं।

तीसरा अश्वारोही : यह मूर्ख है महाराज। अपने स्वामी की शक्ति को नहीं जानता। आपके सामने उसकी प्रशंसा के पुल बाँधता है। भला, आपके सामने उसकी क्या बिसात ? आप अवश्य उसकी परीक्षा लीजिए।

दूसरा अश्वारोही : (स्वगत) हाँ, ऊँट तभी तक बलबलाता है जब तक वह पहाड़ के नीचे नहीं आता। (सरदार से) हाँ, महाराज ! आपकी क्या बराबरी ? आपके सामने तो बड़े-से-बड़ा वीर भी कुछ नहीं। कौन टिक सकता है आपके सामने ?

सरदार : धूर्त कहीं का। बाज़ी उल्टी पड़ गई तो पैंतरे बदलने लगा।

दूसरा अश्वारोही : नहीं, महाराज ! मैं मुग़ालते में था। आपकी बराबरी की बात सोच न सका। पत्थर पड़ गये थे मेरी बुद्धि पर। क्षमा करें। अब कभी ऐसी धृष्टता न होगी।

सरदार : तो देख मेरी शक्ति का चमत्कार। अभी पता चल जायगा बच्चू को आटे-दाल के भाव का और आँखें खुल जाएँगी तुम दोनों की भी। (सरदार प्रताप के सामने जा कर उसे ललकारता है और उस पर भाले का प्रहार करते हुए कहता है।) (प्रताप से) बचाओ अपने को मेरे भाले के वार से।

प्रताप : (भाले के वार से बचते हुए) अच्छा, तो आप भी अपनी करनी करके ही मानेंगे। किन्तु प्रताप गीदड़ नहीं, सिंह है। (कहते हुए भाले का ऐसा प्रहार करता है कि सरदार का अश्व धराशायी हो जाता है और वह पृथ्वी पर गिरते-गिरते बचता है, किन्तु जैसे ही वह सँभल कर खड़ा होता है प्रताप उसे अपने भाले पर उठाकर बहुत दूर फेंक देता है। तभी उसके साथी अश्वारोही उसके पास पहुँचते हैं और उसे उठाकर तत्काल किसी सुरक्षित स्थान पर ले जाते हैं। प्रताप का शस्त्रास्त्र विद्या-शिक्षक रणसिंह उसका शस्त्रास्त्र कौशल एवं पराक्रम देखकर आनन्द-गद्‌गद हो उसे अपने हृदय से लगा लेता है।)

रणसिंह : (प्रताप का आलिंगन करते हुए) धन्य वीर! धन्य!! तुम्हें शस्त्रास्त्र विद्या की शिक्षा देकर मैं धन्य हो गया, मेरा जीवन सार्थक हो गया। मेरी चिन्ता मिट गई। मेवाड़ धन्य हो गया। उसका भविष्य उज्ज्वल है। त्रैलोक्य में उसकी कोई समता नहीं।

प्रताप : नहीं, गुरुदेव! नहीं। अपने इस तुच्छ प्रताप को इतना ऊँचा मत उठाइए कि यह गर्व से पागल हो जाय। क्योंकि यदि ऐसा हो गया तो मेरे अस्त्र-शस्त्राभ्यास एवं तद्‌विषयक शिक्षण की गति अवरुद्ध हो जायगी, उस पर पूर्ण विराम लग जायगा। फलतः मेवाड़ का अनिष्ट होगा और फिर आपको अपने कृत्य पर पश्चात्ताप। वस्तुतः, यह तो आप की महत्ता है जो आप इस तुच्छ शिष्य को ऐसी प्रशंसा का पात्र समझते हैं, अन्यथा मैं इस योग्य कहाँ?

रणसिंह : धन्य हो वत्स! तुम्हारी कोई उपमा नहीं, तुम्हारा कोई सानी नहीं। पराकाष्ठा है तुम्हारी विनम्रता की। 'विद्या ददाति विनयं' उक्ति कितनी सार्थक है तुम्हारे सन्दर्भ में।

प्रताप : नहीं, आचार्य! यह तो आप की कृपा है।

रणसिंह : कृपा है तो जारी रखो अपना अस्त्र-शस्त्राभ्यास। तुम्हारी आकांक्षा पूर्ण हो। (तभी न जाने कहाँ से एक हाथी प्रताप के सामने आकर अपनी सूँड़ उठाकर उसे प्रणाम करता है। प्रताप और रणसिंह को बड़ा आश्चर्य होता है। किन्तु वह बड़े प्रेम से उनकी ओर देखता हुआ बैठ जाता है।)

परदा गिरता है।

तृतीय दृश्य

स्थान : अरण्य

समय : मध्याह्न

[राजकुमारी अजय दे अपनी सहेलियों के साथ सिंह के आखेट हेतु आती है। तभी उसकी दृष्टि सघन अरण्य से निकलते हुए एक सिंह पर पड़ती है। तत्काल, वह अपना धनुष सम्हाल कर, उसके सिर एवं मुख को लक्ष्य कर फुर्ती से कई बाण मारती है। तभी दूसरी दिशा से एक भीषण भाला आकर उसका काम तमाम कर देता है और वह निश्चेष्ट हो धराशायी हो जाता है। तदनन्तर, एक ओर से जब प्रताप अपने साथियों के साथ सिंह के पास पहुँचते हैं तो राजकुमारी अजय दे को देखकर मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं।]

अजय दे : यह शिकार मेरा है। आप का इस पर कोई अधिकार नहीं।

प्रताप : (जागते हुए-से) हूँ। क्या कहा?

अजय दे : यही कि अनधिकार चेष्टा मत कीजिए, अन्यथा इसका परिणाम भुगतना पड़ेगा।

प्रताप : हूँ। क्या मतलब?

अजय दे : अभी समझ में आ जायगा।

प्रताप : तो फिर समझाइए न। विलम्ब किसलिए?

शम्पा : (धीमे स्वर में) नहीं, दीदी! समझाने की आवश्यकता नहीं। यह सब समझता है।

आशा : हाँ, यह जान-बूझ कर ठिठोली कर रहा है, हमें उल्लू बना रहा है अपना उल्लू सीधा करने के लिए।

अजय दे : करने दे ठिठोली। अभी पता चल जायगा श्रीमान् को कि मैं भी कुछ कम नहीं। ऐसा उल्लू बनाऊँगी कि छठी का दूध याद आ जायगा बच्चू को। सारी अक़्लमन्दी भूल जाएँगे एक क्षण में।

प्रताप : यह क्या कानाफूसी कर रही हैं आप लोग मेरे विरुद्ध? कोई षड्यन्त्र रच रही हैं क्या?

अजय दे : हाँ, हाँ, बहुत बड़ा षड्यन्त्र। ऐसा षड्यन्त्र जिसका आप को पता भी न चले।

प्रताप : अच्छा, तो आप मुझे उल्लू बनाना चाहती हैं। किन्तु क्यों? अपना उल्लू सीधा करने के लिए?

अजय दे : हाँ, तो इसमें बुरा क्या है? संसार में सभी एक-दूसरे को उल्लू बनाते हैं अपना उल्लू सीधा करने के लिए और फिर नारी तो सदैव से ही पुरुष को उल्लू बनाती आई है अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए।

प्रताप : अच्छा, तो आपने मुझे चुन लिया? फिर तो हमारा आप से कोई झगड़ा-टंटा नहीं।

अजय दे : आप कहना क्या चाहते हैं? मैं कुछ समझी नहीं।

प्रताप : समझने की आवश्यकता भी नहीं। जब हम दोनों एक हो गए तो फिर झगड़ा-टंटा क्या? शिकार चाहे आप रखें, या मैं। रहेगा तो वह एक ही जगह। और फिर पुरुष की उपलब्धियों पर नारी का अधिकार जो ठहरा।

अजय दे : अजी श्रीमान्! इतना बड़ा भ्रम न पालें, अन्यथा सत्य सामने आने पर औंधे मुँह गिरेंगे।

प्रताप : नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। इस नाचीज़ अकिंचन की दृष्टि जिस पर पड़ती है उस पर इसका अपना एकाधिपत्य हुए बिना नहीं रहता।

अजय दे : इतना घमण्ड? किन्तु याद रखें : घमण्डी को सदैव मुँह की ख़ानी पड़ती है। उसका सिर पर कभी-न-कभी अवश्य नीचा होता है।

प्रताप : हाँ, आप की छत्रच्छाया में जो आ गया। खा तो रहा हूँ आपके मुँह की।

[तभी एक भयानक सिंह भयंकर गर्जन करके अजय दे पर झपटता है, किन्तु पहले से सतर्क प्रताप उस पर अपने भाले का ऐसा प्रहार करता है कि वह वहीं धराशायी हो जाता है। अजय दे और उसकी सखियाँ आश्चर्य-स्तब्ध रह जाती हैं। किन्तु वे उसकी वीरता, सतर्कता और शक्तिमत्ता से अभिभूत भी कम नहीं होतीं।]

अजय दे : धन्यवाद वीर! मैं कृतज्ञ हूँ।

गड़बड़सिंह : हाँ, तो अब कही आपने अपने मन की बात।

ममनून ख़ाँ : मेरे आक़ा भी आपके कम मशकूर नहीं।

अजय दे : क्या मतलब?

ममनून ख़ाँ : मतलब यह कि अब मेरे आक़ा को आप से बहुत उम्मीद है। वे आपके तहेदिल से शुक्रगुज़ार हैं।

अजय दे : यह आप क्या बे-पर की उड़ा रहे हैं?

शम्पा : मानो कोई गधा आँखें बन्द करके दोनों ओर दुलत्ती झाड़ रहा हो।

आशा : अथवा जैसे कोई पागल प्रेमी अपनी प्रेमिका के वियोग में उसके स्थान पर किसी पत्थर से सिर मारे।

प्रताप : तो फिर आप दोनों भी किसी गधे अथवा पागल प्रेमी से कम नहीं। हाँ, आप की आक़ा अवश्य इस श्रेणी में नहीं आतीं।

अजय दे : अच्छा। तो फिर कौन-सी श्रेणी निश्चित कर रखी है आप ने मेरे लिए?

प्रताप : आप मेरी दृष्टि में क्या हैं, यह मैं कैसे कहूँ?

अजय दे : क्यों? आप गूँगे तो नहीं हैं जो कुछ कह न सकें।

प्रताप : गूँगा तो नहीं हूँ पर बात कुछ ऐसी ही है। गूँगे केरी सरकरा बैठे मुसुकाई।

अजय दे : क्या मतलब? मैं कुछ समझी नहीं।

प्रताप : तो समझ लीजिए : आप के रूप-सौन्दर्य के समुद्र में मैं डूब गया।

अजय दे : पूर्णतया अंशतः?

प्रताप : पूर्णतः और समग्रतः।

अजय दे : तब तो आप को मुक्त हो जाना चाहिए सांसारिक बंधनों के मायाजाल से।

प्रताप : कैसे?

अजय दे : अनबूड़े बूड़े, तिरे जे बूड़े सब अंग।

प्रताप : अच्छा, तो आप साहित्य की भी प्रकाण्ड पण्डित हैं।

अजय दे : आप का भी तो साहित्य में कम दख़ल नहीं।

प्रताप : मैं गँवार भला यह सब क्या जानूँ?

अजय दे : अच्छा, तो बिना जाने-समझे ही आप रूपकों की भाषा बोल रहे हैं?

प्रताप : यह तो आप के रूप-लावण्य का प्रभाव है।

अजय दे : यदि ऐसा है तो आप कवि-साहित्यकार की श्रेणी से दूर नहीं।

प्रताप : अच्छा, तो क्या मैं आप के रूप-लावण्य का वर्णन कर सकता हूँ?

अजय दे : क्यों नहीं? क्यों नहीं? अवश्य।

प्रताप : तो फिर अपने नेत्रों रूपी तुरंगों को अपने नियन्त्रण में रखिए।

अजय दे : क्यों?

प्रताप : इसलिए कि ये बरबस मेरे मन-प्रांगण में उछल-कूद करके मेरा ध्यान भंग कर रहे हैं।

अजय दे : और? और भी कुछ मेरे लिए करणीय?

प्रताप : करणीय क्या होगा और अब?

अजय दे : क्यों?

प्रताप : इसलिए कि सब कुछ तो आप कर चुकी हैं।

अजय दे : मैं? मैं कर चुकी हूँ।

प्रताप : हाँ, आप नहीं तो आपका साथी रूप-लावण्य।

अजय दे : कैसे?

प्रताप : आपके रूप-लावण्य ने ही तो आहत कर रखा है मेरे मन-कुरंग को। आप के सौन्दर्य ने ही तो विमोहित कर रखा है मेरे अबोध हृदय को।

अजय दे : और

प्रताप : आपके रूप-सौन्दर्य का जादू मेरे मन-मस्तिष्क पर छा गया है। आपके काले-घुँघराले मेघ-घटाओं के समान सुन्दर केश, प्रेम की अमृत-वर्षा कर, मेरे मन-मयूर को अपने संकेतों पर नचा रहे हैं।

अजय दे : और? और भी कुछ?

प्रताप : आपकी कटि, नासिका और गति; दंतावलि और सुमति और आपके ओष्ठ-द्वय और चिबुक की करनी अकथनीय है। आप की तेजस्विता, पवित्रता और स्निग्धता; आपका

विद्युत् के समान वर्ण; और आपके पर्वतवत् उन्नत उरोजों, कर-कमलों और पद-पल्लवों की शोभा अवर्णनीय है। मेरा मन-पाँखी आपके अधीन है। मैं क्या करूँ?

अजय दे : किसी अनुभवी चिकित्सक से अपने प्रेम-रोग का उपचार। (तभी उसकी दृष्टि अरण्य के एक कोने में छिपे शक्तिसिंह पर जाती है। अजय दे सकपका जाती है। प्रताप असमंजस में पड़ जाता है। शक्तिसिंह मुसकराते हुए बाहर आता है।)

शक्तिसिंह : आप दोनों के प्रेम-रोग का उपचार पिताजी से कहकर मैं करवा दूँगा। आप निश्चिन्त रहें। आपका देवर इतनी सेवा तो कर ही सकता है।

[शक्तिसिंह वहाँ से चला जाता है। अजय दे मुसकुराती है। प्रताप आश्चर्य से उसे देखता रह जाता है।]

परदा गिरता है।

चतुर्थ दृश्य

स्थान : चित्तौड़गढ़

समय : प्रातःकाल

प्रताप : साथयो ! मेवाड़ के स्वामिभक्त वीरो ! जननी जन्मभूमि की गौरव-रक्षा के लिए कृत-संकल्प एवं समर्पित स्वनामधन्य शूरो ! सलूम्बर के राठौड़ों ने सलूम्बर और छप्पन क्षेत्र में अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर ली है। डूँगरपुर के रावल आसकरण ने हम से सम्बन्ध विच्छिन्न करके हमारा अपमान किया है; हमारी शक्ति को चुनौती दी है। अतः उन्हें ऐसा पाठ पढ़ाना है कि वे फिर से विद्रोह न कर सकें।

रामसिंह : हाँ, यंवुराज ! हम सब आप से अक्षरशसहमत हैं। वैमत्य का कोई कारण नहीं। आप का अपमान हम सब का अपमान है। आपका स्वाभिमान हम सब का स्वाभिमान है। हम आप से पृथक् नहीं। आप के एक-एक श्रम-बिन्दु के लिए हम अपना सारा रक्त बहा देंगे।

शक्तिसिंह : मेवाड़ के स्वाभिमान के लिए, चित्तौड़ की अक्षय कीर्त्ती के लिए हम सब मर मिटने के लिए तय्यार हैं।

कृष्णदास : जननी जन्मभूमि की महत्त्व-रक्षा के लिए, मेवाड़ और चित्तौड़ की अक्षय कीर्त्ती की अक्षुण्णता के लिए, हम सब कृत-संकल्प हैं और इस संकल्प पर हम सब के प्राण न्योछावर हैं।

भीमसिंह : युवराज ! अब विलम्ब अनपेक्षित है। आज्ञा दीजिए। आप का संकेत पाते ही हम सलूम्बर और बागड़ राजमहल की ईंट से ईंट से बजा देंगे। हमारी अभियान-गति आँधी, तूफ़ान और प्रलय की गति को भी मात करती प्रतीत होगी।

सब : हाँ, युवराज ! हम सब विजय-अभियान के लिए आतुर हैं। मात्र आपके आदेश की प्रतीक्षा है।

प्रताप : तो फिर शुभस्य शीघ्रम्। विजय-अभियान की तय्यारी के साथ अस्त्र-शस्त्रादि से सुसज्जित हो कर प्रस्थान करो। ध्यान रहे मेवाड़ के गौरव का, जननी जन्मभूमि का और भारत माता का। हर हर हर महादेव।

सब : हर हर हर महादेव। (सेना के साथ प्रताप का प्रस्थान।)

परदा गिरता है।

पंचम दृश्य

स्थान : सलूम्बर

समय : प्रातःकाल

[कुँवर प्रताप अपने सैनिक अभियान पर है। उसका उद्देश्य सलूम्बर के राठौड़ों और बागड़िया चौहानों को विजित करके उन्हें पुनः मेवाड़ की अधीनता स्वीकार कराना है, स्वजातीयों की एकता का पाठ पढ़ा कर स्वाधीनता, पराक्रम और शौर्य के लिए प्रख्यात मेवाड़ के झंडे तले लाना है। राठौड़ों ने छप्पन प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया है और वे अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए मर मिटने के लिए उद्यत हैं।]

प्रताप साथियो और मित्रो !
धैर्य से काम लो। विवेक का गला मत घोटो। सलूम्बर और छप्पन क्षेत्र मेवाड़ के अभिन्न अंग हैं। इन्हें उससे पृथक् करके उसे पंगु मत बनाओ। उसे अशक्त और निर्बल मत करो।

सिंहदेव : यदि मेवाड़ अशक्त है तो उसे सशक्त बनाने का व्यर्थ प्रयास क्यों? क्या अधिकार है अशक्त को हमें अपनी अधीन रखने का? हम स्वतन्त्र हैं और अब हमें संसार की कोई भी शक्ति अपने अधीन नहीं कर सकती। अब हम अपनी स्वतन्त्रता को किसी भी मूल्य पर कभी नहीं बेच सकते।

प्रताप : आप क्षत्रिय हैं; स्व-जातीय हैं, आत्मीय हैं, हमारे अपने भाई हैं। भाई को भाई से पृथक् नहीं किया जा सकता। भाई की भाई से स्वतन्त्रता कैसी? वह तो यों ही एकत्व के सूत्र में अनुस्यूत है। उसमें रक्त की एक ही अन्तर्धारा प्रवहमान है। भाई को भाई से पृथक् करना अंग को अंगी से काट देना है और अंग के बिना अंगी क्या है? अशक्त, असमर्थ और पंगु। इसलिए एकता के झंडे तले आओ। मिथ्या आत्माभिमान को एकता में आड़े आने न दो क्योंकि शक्ति एकता में है, व्यर्थ विरोध, पृथक्ता अथवा भिन्नता में नहीं। शस्त्र डाल दो। जहाँ हृदय से हृदय मिलने को आतुर हों वहाँ शस्त्रों का क्या काम?

सिंहदेव : शस्त्र क्षत्रिय के सर्वस्व हैं। मेरे जीते जी उनका समर्पण सम्भव नहीं। सैनिको! आक्रमण करो।

[सैनिक शत्रुओं पर टूट पड़ते हैं। कतिपय योद्धा धराशायी होते हैं। सिंहदेव प्रताप पर खड्ग-प्रहार करता है पर प्रताप उसे अपनी ढाल पर रोक कर मुसकराता है। सिंहा प्रताप से अपनी दाल गलती न देख कर कृष्णदास पर अपने भाले का प्रहार करता है। किन्तु कृष्णदास उससे बचकर बड़ी वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए अपने भाले से उसे छेद देता है। सिंहदेव को धराशायी होते देखकर राठौड़ी सेना के पैर उखड़ जाते हैं। युद्ध रुक जाता है। प्रताप मरणसन्न सिंहा को सान्त्वना देता है और उसके परिवार को प्रत्येक प्रकार के सहयोग का आश्वासन। चतुर्दिक् विजय के दुन्दुभिनाद के साथ आतिशबाज़ी छूटती है।]

परदा गिरता है।

षष्ठ दृश्य

स्थान सोम नदी-तट का युद्ध-स्थल

समय : प्रातःकाल

[प्रताप और रावल आसकरण की सेनाएँ आमने-सामने हैं। प्रताप की सेना में रावत खेतसिंह, भवानीसिंह, लालसिंह, रावत जग्गा, दुर्गा सिसोदिया और कीता आदि योद्धा हैं और रावल आसकरण की सेना में श्यामलदास, कर्मसिंह, लाखनसिंह, सहस्रसिंह, रणधीरसिंह आदि योद्धा। प्रताप की सेना को आगे बढ़ते हुए देख कर श्यामलदास उसे ललकारता है।]

श्यामलदास : आगे बढ़ने का दुस्साहस न करना, अन्यथा अभी तुम्हारे कटे हुए सिर रणभूमि में इतस्ततः लुढ़कते नज़र आएँगे और शवों को चील-कौवे और गिद्ध नोच-नोच कर खाएँगे। युद्ध में ऐसी दुर्गति होगी कि कभी किसी ने कल्पना भी न की होगी।

प्रताप : वीर युद्ध में अपने खड्ग के जौहर दिखाते हैं, व्यर्थ डींग नहीं मारते क्योंकि जो गर्जते हैं वे बरसते नहीं। यदि साहस है तो कुछ कर दिखाओ। तर्जनी देखकर मुझनि वाला यहाँ कोई नहीं।

श्यामलदास : तो देखिए मेरा रण-कौशल और मेरी तलवार के जौहर। अभी पता चल जायगा आपके वीरों को मेरी शक्ति का।

प्रताप : (मुसकुराते हुए) हाँ, मैं तो अभी देखूँगा ही। मुझे तो शायद बाद में ही कुछ करना पड़े और सम्भव है कि उसकी आवश्यकता ही न पड़े, उसका अवसर ही न आए।

कर्मसिंह : आप कहना क्या चाहते हैं? मैं कुछ समझा नहीं।

प्रताप : यही कि अभी तो आप लोग मेरे साथी योद्धाओं के साथ युद्ध-क्रीड़ा की आँख-मिचौनी खेलकर अपना रण-कौशल प्रदर्शित कीजिए।

श्यामलदास : आप हमारा अपमान कर रहे हैं। यह हमें असह्य है। सैनिको! आक्रमण करो शत्रु-सेना पर। पहुँचा दो सभी को यमपुरी। नष्ट कर दो इनकी शस्त्र-सामग्री और रक्षा-पंक्ति।

प्रताप : प्रत्याक्रमण करो। दिखा दो शत्रु को अपना रण-कौशल, हस्त-लाघव तथा अपनी वीरता, शक्ति, साहस और पराक्रमशीलता। दोनों ओर के योद्धा अपने-अपने प्रतिद्वन्द्वियों पर टूट पड़ते हैं। भयंकर युद्ध होता है। रावल आसरकण की सेना के श्यामलदास,

कर्मसिंह और कतिपय अन्य वीर योद्धा मारे जाते हैं। प्रताप की ओर से वीर जग्गा खेत रहता है। बागड़ी सेना के पैर उखड़ जाते हैं और वह भाग खड़ी होती है। प्रताप की विजय होती है। आसकरण अधीनता स्वीकार कर लेता है और शान्ति समझौता करके प्रताप का आतिथ्य-सत्कार करता है। प्रताप का उद्देश्य पूर्ण हो जाता है। अन्त में, आसकरण को समझाते हुए वह कहता है—

प्रताप : मुझे खेद है अकारण रक्तपात के लिए। मैं कभी इसके पक्ष में न था। किन्तु मुझे विवश कर दिया आप के दम्भी योद्धाओं ने। आप क्षत्रिय हैं, स्व-जातीय हैं, आत्मीय हैं। आप से संघर्ष हमें अभीष्ट नहीं। हमें चाहिए कि हम मिल कर विजातीयों, विदेशी आक्रान्ताओं का सामना करके अपनी जननी जन्मभूमि, मातृभूमि मेवाड़ और स्वदेश के साथ भारतीय संस्कृति की रक्षा करें।

आसकरण : हम सब आप से सहमत हैं, आप के साथ हैं और आपके हर अभियान में प्राणपण से आपको सहयोग देंगे।

सब : कुँवर प्रताप की जय। मातृभूमि की जय। भारत माता की जय।

[जय-जयकार की ध्वनि चारों ओर फैल जाती है। वीर योद्धाओं के मन-मयूर आनन्दातिरेक नाचने लगते हैं। फुलझड़ियाँ छूटती हैं।]

परदा गिरता है।

सप्तम दृश्य

स्थान : राजमहल के अन्तःपुर का अजय दे आवास-खंड

समय : रात्रि 10 बजे

[अजय दे राजमहल के अन्तःपुर के अपने आवास-खण्ड में अपनी सहेलियों के साथ हास्य-परिहास एवं मनोविनोद में रत है। उसकी सहेलियाँ उसे उसके पूर्व प्रेम-प्रसंग को लेकर छेड़ती हैं पर वह भी कुछ कम नहीं : उनकी छेड़-छाड़ का ऐसा मुँह तोड़ जवाब देती है कि वे दंग रह जाती हैं।]

रागिनी : पुष्प के जीवन की सार्थकता उसके प्रेमी भ्रमर के सतत सम्पर्क-साहचर्य में है। उसे उसका वियोग सह्य नहीं : क्षण भर भी उससे विलग हुआ नहीं कि वह मुरझा जाता है।

अजय दे : किन्तु सभी पुष्प एक-से नहीं होते। कुछ कठोर वनखण्ड की विषम परिस्थितियों में विकसित होते हैं, कुछ कँकरीली-पथरीली ज़मीन में और कुछ वाटिकाओं, उद्यानों अथवा उपवनों में विकसित होकर उनकी शोभा-वृद्धि करते हैं। परिस्थितियाँ सब की एक-सी नहीं होतीं और परिस्थितियाँ ही व्यक्ति को मोड़ती-ढालती हैं। परिस्थितियाँ ही व्यक्ति को बनाती-बिगाड़ती हैं और परिस्थितियाँ ही उसे संवारती-सजाती। व्यक्ति के जीवन का निर्माण और संचालन उसकी परिस्थितियाँ करती हैं। कहाँ किसी विशाल वन की स्वच्छन्द हरिणी और कहाँ विवश-परवश-पराधीन पालतू मृगी।

विजया : आश्चर्य ! इतना परिवर्तन, सामंजस्य और नैराश्य ! कल्पनातीत ! !

अजय दे : परिवर्तन प्रकृति का नियम है, सामंजस्य जीवन और नैराश्य परिस्थितियों की देन। सुना नहीं : सब दिन होत न एक समान। कभी घी घना, कभी मुट्ठी चना। कभी संयुक्त जीवन का अदम्य उल्लास और कभी वियुक्त जीवन का विषण्ण नैराश्य।

चाँदनी : नहीं, सखी ! अंधकार के दिन लद गए। अब तो शुक्ल पक्ष की चाँदनी आने वाली है।

शाम्भवी : हाँ, सखी ! विश्वास कर महाराज कुमार आने ही वाले हैं बागड़, सलूम्बर और छप्पन क्षेत्र को विजित करके। कौन टिक सकता है उनके सामने ? तुम तो उन्हें अच्छी तरह जानती हो। ख़ूब परिचित हो उनकी शक्ति, दृढ़ता और पराक्रमशीलता से।

अजय दे : तेरे मुँह में घी-शक्कर। तेरी बात सच्ची निकली तो आजीवन कृतज्ञ रहूँगी और ···।

शाम्भवी : और क्या?

अजय दे : तेरी चोंच सोने-से मढ़वा दूँगी।

[सब ठहाका मार कर हँस पड़ती हैं। तभी प्रताप धीरे-से प्रवेश करते हैं। चतुर्दिक् प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है। अजय दे के नेत्रों में आनन्द के आँसू उमड़ आते हैं। सखियाँ बड़ी आयु है महाराज कुमार की, कहकर एक ओर चली जाती हैं। अजय दे प्रताप के चरणों में गिर पड़ती है। किन्तु प्रताप उसे उठा कर अपनी बाहों में समेट लेते हैं।]

प्रताप : नहीं, प्रिये! तुम्हारा स्थान चरणों में नहीं, मेरे हृदय-मन्दिर में है।

अजय दे : नहीं, स्वामी! मैं आपके चरणों की दासी हूँ। इसलिए मुझे आपके चरणों में ही अधिक सुख मिलता है।

प्रताप : मेरे मन-मन्दिर की देवी! तुम्हारे सतीत्व के पुण्य प्रताप और मंगल-कामनाओं का ही तो यह प्रभाव है कि तुम्हारे प्रताप ने जाने कितनी विघ्न-बाधाओं के समुद्र अगस्त्य की अंजलि का बना दिया; न जाने कितने उद्‌भट वीरों को तलवार के घाट उतार दिया; न जाने कितने अश्वारोही शूरों को खड्‌ग के एक प्रहार से ही अश्व सहित काटकर पृथ्वी पर सुला दिया और न जाने कितने उद्धत घमंडियों को भाले की नोक से छेद कर धूल चटा दी।

अजय दे : मैं धन्य हूँ, कृतार्थ हूँ प्राणेश्वर! ईश्वर आप को अमोघ शक्ति दे; भगवान् एकलिंग आप की सदैव रक्षा करें; विषमतिविषम परिस्थितियों में भी आप का कभी बाल बाँका न हो; दिग्दिगन्त में आप की कीर्ती फैले; भगवान् भुवन-भास्कर के समान आपका नाम एक महान् ज्योतिर्पिंड बनकर सदैव चमकता रहे।

प्रताप : तो फिर अपने कोकिल-कण्ठ से वीणा के तारों को झंकृत करता हुआ एक सुन्दर गीत। बहुत थक गया हूँ। किंचित् विश्राम की आवश्यकता है। वीर के बाद शृंगार अपेक्षित है।

अजय दे : जो आज्ञा आर्यपुत्र! अभी वीणा लाकर गाती हूँ। (अजय दे वीणा पर स्वर संधान करके गाती है—)

हे कीर्त्तीपुरुष! हे ज्योतिपुरुष!!
इतिहास पुरुष! हे दिव्य पुरुष!!
हे भूतल के आलोक पुरुष!

हे शिवशंकर मूर्द्धन्य-पुरुष !
हे स्वतन्त्रता के दिव्य भाल।
इस वीर-भूमि के अमर लाल।
पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल।
भुवन त्रय के गौरव विशाल।
तुम स्वाभिमान मार्त्तण्ड-मूर्त्ति।
तुम अखिल विश्व की दिव्य भूति।
नैतिकता की पावन विभूति।
औ' सर्वधर्म समभाव मूर्त्ति।
मेरे जीवन की सार्थकता।
केवल तुम से मेरे भर्त्ता !
मेरी कांक्षा पूरन कर्त्ता।
तुम मातृभूमि रक्षणकर्त्ता।
क्या कहूँ वाग्देवी वर दे।
मेरी ख़ाली झोली भर दे।
जग में तव कीर्त्ती अमर कर दे।
मेरी वांछा पूरी कर दे।
हे कीर्त्ती पुरुष ! ···

[गीत सुनकर मन्त्रमुग्ध हो प्रताप अजय दे को अपने आलिंगनपाश में बाँध लेता है। तभी आकाश में बिजली चमकती है, कौंधा लपकता है और मेघ-गर्जन के साथ वर्षा होती है।]

परदा गिरता है।

आठवाँ दृश्य

स्थान : गोड़वाड़ दुर्ग

समय : पूर्वाह्न

[अरावली पर्वतमाला के पश्चिमी भाग की तलहटी में स्थित मारवाड़ के रेतीले भू-भाग से सटा हुआ गोड़वाड़ प्रदेश प्राचीनकाल से मेवाड़ के अधीन था। किन्तु राणा उदयसिंह के राज्यकाल के आरम्भिक वर्षों में जोधपुर के शासक मालदेव ने इसे अपने अधीन कर लिया। अत: इसकी पुनर्विजय के उद्देश्य से कुँवर प्रताप अपनी सेना सहित यहाँ आ डटा है। किन्तु वह यह नहीं चाहता कि व्यर्थ रक्तपात हो। अत: वह दुर्ग-द्वार पर दुर्गवासियों को उद्‌बोधित करके दुर्ग-द्वार खुलवाने के लिए प्रयास-रत है।]

प्रताप : भाइयो ! गोड़वाड़ प्राचीनकाल से मेवाड़ का अभिन्न अंग है। मेवाड़-जननी के शरीर से काट कर उसे अलग नहीं किया जा सकता। आप सब हमारे सजातीय हैं, बन्धु-बान्धव हैं, आत्मीय हैं। अत: स्वभावत: हम आप से विलग नहीं रह सकते।

समुद्रसिंह : आत्मीयता का व्यर्थ ढोंग मत करो। हम जानते हैं कि आप क्या चाहते हैं। क्या उद्देश्य है आप का?

प्रताप : यही कि हम और आप एक होकर, हिल-मिलकर रहें; आत्मीय एकता की अखण्ड अनुभूति का आनन्द लें; एक-दूसरे के सुख-दु:ख में सहभागी बनें और पारस्परिक एकता के सूत्र में अनुस्यूत होकर भारतीयता और भारतीय संस्कृति एवं तज्जन्य मूल्यों की रक्षा करें।

समुद्रसिंह : यह सब आप ही करें। हमें कुछ करने की आवश्यकता नहीं।

प्रताप : नहीं, भाई ! अपनी बुद्धि पर बल दें, जगदम्बा सरस्वती की दिव्य देन का सदुपयोग करें; अपनी आत्मा को टटोलें, अन्त:करण की सुनें।

समुद्रसिंह : आप ही काफ़ी हैं यह सब करने के लिए।

प्रताप : अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकृता। हम सब मिलकर ही कुछ कर सकते हैं। एकता के बिना शक्ति कहाँ? पृथक् होकर हम सब निर्बल-अशक्त और असमर्थ हो जाएँगे। इसलिए आप के सहयोग का हाथ चाहिए।

समुद्रसिंह : तो फिर कर लीजिए न हमें परास्त करके अपनी इच्छा पूरी।

प्रताप : हम निर्बल, अशक्त अथवा असमर्थ नहीं हैं।

समुद्रसिंह : तो आज़मा लो न अपनी शक्ति इस दुर्ग-द्वार से। इसे अपेक्षा है आपकी शक्ति की, बड़ा उत्सुक है आपकी शक्ति-दर्शन के लिए, आपके प्रवचनों के लिए नहीं।

प्रताप : (क्रूर काल के समान क्रुद्ध होकर) तो देखो मेरी शक्ति। (भाला सम्हालकर पीछे की ओर जाता है और प्रचण्ड वेग से दुर्ग-द्वार पर अपने भीषण भाले से ऐसा प्रहार करता है कि एक ही वार में दुर्ग-द्वार टूट जाता है और न जाने कितने गोड़वाड़ी योद्धा हताहत हो जाते हैं। तभी प्रबल वेग से मेवाड़ी सेना प्रवेश करती है। किन्तु समुद्रसिंह प्रसन्न होकर 'धन्य-धन्य' कहता हुआ कुँवर प्रताप के चरणों में गिर पड़ता है। पर प्रताप उसे उठाकर अपने हृदय से लगा लेता है।)

समुद्रसिंह : यही चाहता था मैं आपसे, यही अपेक्षा थी हमें आपके साहस, शौर्य-पराक्रम और शक्ति-सामर्थ्य एवं ओजपूर्ण व्यक्तित्व से। हमें विश्वास हो गया कि हम आपके झंडे तले सुरक्षित हैं और रक्षा कर सकेंगे अपनी प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं तज्जन्य मूल्यों एवं आदर्शों की।

प्रताप : तो फिर अब हमें सहयोग दोगे या नहीं?

समुद्रसिंह : क्यों नहीं? अवश्य। अब हम प्राणपण से आप को सहयोग देंगे और आप की अधीनता में रह कर अतिशय गर्व का अनुभव करेंगे। संसार की कोई भी शक्ति अब हमें आपसे पृथक् नहीं कर सकती।

सब : कुँवर प्रताप की जय। मातृभूमि की जय। वीर भूमि की जय। भारत माता की जय।

[जय-जयकार के उपरान्त वाद्य-संगीत की स्वर-लहरियों पर एक गीत थिरकता है।]

अनेकता को एकता की चाह है। अनेकता में एकता ही राह है।
है एकता में शक्ति जो, नहीं कहीं। जो एकता में शान्ति-सुख, नहीं कहीं।
अनेकता करे उसे विखंडिता। जो एकता रहे तो वह अखंडिता।
महान् वीर-भूमि यह अखण्ड है। प्रताप मातृ-भूमि का प्रचण्ड है।
प्रचण्ड शक्ति औ' प्रचण्ड शौर्य है। अखण्ड स्वाभिमान का स्वदेश है।
अनेकता को एकता की चाह है। अनेकता में एकता ही राह है।

[गीत समाप्त होते ही एक दिव्य प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

नवम दृश्य

स्थान : रामसिंह का मंत्रणा-कक्ष

समय : अपराह्न

रामसिंह : महाराणा ने यह अच्छा नहीं किया।

अक्षयराज : सब रूप रानी धीर कँवर की करनी का प्रताप है।

रामसिंह : पर यह अन्याय है। हम इसे सहन नहीं कर सकते।

अक्षयराज : सहना ही होगा। ईर्ष्या-द्वेष और फूट के बीज बोना ऐसी स्थिति में उचित नहीं।

रामसिंह : औचित्य का ही तो प्रश्न है। बड़े के होते हुए छोटा कैसे उत्तराधिकारी हो सकता है?

अक्षयराज : हो सकता है क्या? हो गया और किसी के कान में जूँ तक न रेंगी।

रामसिंह : नहीं, सत्य को कभी झुठलाया नहीं जा सकता। उसे एक क्षण के लिए रोक भले ही दिया जाय, उसके प्रकट होने में विलम्ब भले ही हो जाय, पर जब वह प्रकट होता है तो समस्त संसार को हिला देता है। परम पराक्रमी प्रताप के समक्ष जगमाल की क्या विसात कि वह महाराणा का पद ग्रहण करे।

भामाशाह : करणीय तो अब करना है। देखना है कि हमारे विमत के बावजूद जगमाल महाराणा कैसे हो सकता है? मैं स्वयं हाथ पकड़ कर उसे गद्दी से उतार दूँगा।

झाला बीदा : तो इस पुण्य कार्य में मेरा सहयोग आपको सबसे पहले मिलेगा।

रामसिंह : नहीं। तुम लोगों को यह सब करने की आवश्यकता नहीं। यह कार्य हम लोग करेंगे। तुम्हें सभासदों एवं सामंतों को सम्भालना होगा, उनकी मुख-मुद्राएँ एवं भाव-भंगिमाएँ क्या कहती हैं, इसे जानना होगा, उनका निरीक्षण-परीक्षण करना होगा।

शालिवाहन : हम सब तय्यार हैं।

भामाशाह : पर यह पुण्य कार्य तुरन्त होना चाहिए।

झाला बीदा : हाँ, राजन्! शुभस्य शीघ्रम्।

भवानीसिंह : हाँ, तात-श्री! एक क्षण का भी विलम्ब अनपेक्षित है।

रामसिंह : तुरन्त होगा, वत्स ! सत्य कभी पराजित नहीं हो सकता। विश्वास रखो।

अक्षयराज : हाँ, ध्यान रखना। तुम्हारे युवारक्त में उबाल न आए। समस्या शान्तिपूर्वक सुलझ जायगी, उसका शान्तिपूर्ण समाधान हो जायगा। उग्रता अथवा क्रोध की आवश्यकता नहीं। सब अपने ही हैं। जगमाल सौतेला ही सही, पर वह प्रताप का अनुज है। महाराणा के सामने अनुज के आसन पर उसे बिठा देंगे।

रामसिंह : किन्तु समस्या यह है कि प्रताप को राज्य का कोई आकर्षण नहीं, राज-सिंहासन से उसे कोई लगाव नहीं। राज-मुकुट को वह काँटों का ताज समझता है। यही नहीं, जगमाल भी उसे प्रिय है। उसकी अप्रसन्नता भी उसे सह्य नहीं।

भामाशाह : किन्तु मेवाड़ की अक्षय कीर्त्ती और गौरव-रक्षा प्रताप के अतिरिक्त अब अन्य किसी से सम्भव नहीं। दिल्लीश्वर अकबर की गिद्ध-दृष्टि मेवाड़ पर है और मेवाड़ की स्वतन्त्रता और स्वाभिमान की रक्षा के लिए रणसिंह प्रताप की आवश्यकता। उसका साहस, शौर्य एवं पराक्रम; उसकी उदारता, शक्ति, सज्जनता एवं मित्र-वत्सलता; उसकी कूटनीतिक चातुरी एवं प्रशासनिक क्षमता; उसका अस्त्र-शस्त्राभ्यास, विजय-अभियान-कौशल एवं युद्धानुभव मेवाड़ के लिए ऐसे वरदान हैं जिनसे उसे वंचित नहीं किया जा सकता।

झाला बीदा : किन्तु उन्हें अपने कर्त्तव्य का सर्वाधिक ध्यान है। जननी-जन्मभूमि की सेवा से बढ़कर उनके लिए अन्य कोई पुण्य कार्य नहीं। उससे विमुख होकर भी वे सुखी नहीं रह सकते।

शालिवाहन : हाँ, देश-प्रेम उनमें कूट-कूट कर भरा है। मातृभूमि की सेवा से विमुख होना उनके लिए सम्भव नहीं। उन्हें मनाने का दायित्व मुझ पर है। इस विषय में आप निश्चिन्त रहें।

अक्षयराज : तथास्तु। आप अपना दायित्व निभाकर मेवाड़ को उसका प्राप्य दिलाएँ। हम अपनी योजना को कार्यान्वित करेंगे। याद रहे : मेवाड़ का भविष्य हम सब के हाथों में है। हमें उसे बिगड़ने से बचाना है, उसका भविष्य बनाना है। उसके कल्याण एवं मंगल में ही हम सब का कल्याण है।

सब : जननी जन्मभूमि की जय। मेवाड़ की जय। भारत माता की जय।

[तभी नेपथ्य में बिजली की कड़क के साथ एक दिव्य आलोक होता है। लोग एक-दूसरे को आश्चर्य से देखते हैं। पृष्ठभूमि में मंगल-वाद्य बजते हैं।]

परदा गिरता है।

दसवाँ दृश्य

स्थान : गोगूँदा का राज-दरबार

समय : अपराह्न

[जगमाल सिंहासन पर आसीन है। महाराणा उदयसिंह का अन्तिम संस्कार करके मन्त्री, सामन्त और सभासद वापस लौट आए हैं। प्रताप की वीरता, साहस, शौर्य एवं शक्तिमत्ता से प्रभावित प्रधान सामन्त-परिषद् स्वर्गीय महाराणा के निर्णय से असहमत है। उसकी वरिष्ठता, सज्जनता, उदारता, बुद्धि-विवेकशीलता, धर्म-निरपेक्षता, मित्र-वत्सलता और न्यायप्रियता आदि गुणों के कारण उन्होंने उसे गद्दी पर बिठाने का निर्णय कर लिया है। अत: सभी भावी घटना एवं सम्भावनाओं की कल्पना से उद्वेलित हैं। तभी चूड़ावतों की प्रधान शाखा के सलूम्बर के रावत कृष्णदास चूड़ावत जगमाल के पास जाते हैं और उसके कान में कुछ कहकर सभा को सम्बोधित करते हुए कहते हैं।]

कृष्णदास : सम्मान्य सामन्तगण एवं सभासदो !
स्वर्गीय महाराणा की इच्छा की पूर्ति और आज्ञा का पालन हो चुका। अत: अब न्याय की बारी है। परम वीर प्रताप के अनुज जगमाल भी हम से सहमत हैं। उन्हें इसमें कोई आपत्ति नहीं। अत: वे महाराणा के अनुज के आसन पर बैठेंगे और मेवाड़ राज्य के वास्तविक उत्तराधिकारी प्रताप राजसिंहासन पर। तदुपरान्त, कृष्णदास जगमाल का हाथ पकड़कर महाराणा के सामने भाई के स्थान पर उसे बैठाते हैं। सभा में आनन्द की लहर दौड़ जाती है। सब की दृष्टि प्रताप की ओर जाती है। तभी, ग्वालियर के राजा रामसिंह तोमर और प्रताप के नाना अक्षयराज प्रताप को राज सिंहासन पर बैठाते हैं। रावत कृष्णदास प्रताप की कमर में राजकीय तलवार बाँधते हैं और फिर उनके सामने झुककर हाथ से ज़मीन का स्पर्श करके तथा उसे मस्तक तक ले जाकर महाराणा को तीन बार प्रणाम करके उनके प्रति सम्मान व्यक्त करते हैं। तदुपरान्त, अन्य राव-राजा, सामन्त एवं सभासद भी उसी प्रकार तीन-तीन बार प्रणाम करके महाराणा के प्रति आदर, सम्मान एवं स्वामिभक्ति प्रकट करते हैं।

रामसिंह : महामहिम महाराणा, सामन्तगण एवं साथियो !
मेवाड़ का भाग्य अधर में था। दुर्बुद्धि और राज्य-लोलुपता ने गृह-कलह और फूट के जो बीज बोए थे, उनका पटाक्षेप हो चुका है। राज्य पर विपत्तियों के जो बादल मँडरा रहे थे, सद्बुद्धि और दूरदर्शिता के झंझावात से वे उड़ गए हैं। मेवाड़ का

भाग्य बिगड़ने से बच गया है। एकता, सहृदयता और मानवता की त्रिवेणी में स्नान करके वह पवित्र हो चुका है। देश में विदेशी शक्तियों का प्रभुत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। समस्त देश आक्रान्ताओं से पादाक्रान्त है। मेवाड़ की स्वतन्त्रता एवं सम्प्रभुता खतरे में है। किन्तु परमात्मा को लाख-लाख धन्यवाद कि मेवाड़ का भविष्य आज ऐसे महाराणा के हाथो में है जो संसार की किसी भी शक्ति से लोहा ले सकता है। उसके स्वातन्त्र्य-दीप के बुझने का अब कोई ख़तरा नहीं; उसकी स्वतन्त्रता एवं सम्प्रभुता की अब कोई चिन्ता नहीं। मेवाड़ की कीर्त्ती-पताका और उसके कुल-गौरव की रक्षा अब महाराणा प्रताप के ऐसे सबल हाथों में है, जिनकी कोई उपमा नहीं। उन्हें पाकर मेवाड़ आज धन्य है। उन पर मेरे प्राण न्योछावर हैं। उनकी अक्षय कीर्त्ती दिग्दिगन्त में परिव्याप्त हो, इस कामना के साथ उन्हें मेरा शतशः प्रणाम। (महाराणा प्रताप को प्रणाम करके अपने आसन पर बैठते हैं।)

सब : महाराणा प्रताप की जय।
मेवाड़ की जय।

अक्षयराज : महामहिम महाराणा प्रताप, सम्मान्य राजाओं, सामन्तों एवं साथियों! मेवाड़ का सौभाग्य-सूर्य समुदित है, उसकी कीर्त्ती का प्रकाश दिशा-विदिशाओं में परिव्याप्त है। उसकी अक्षय कीर्त्ती के दिव्य प्रकाश की समता कोई अन्य नहीं कर सकता। उसके यश की अक्षुण्णता सदैव बनी रहे, इसके लिए हम सब मर मिटें, यही हमारा संकल्प है और यही हमारी कामना। जननी जन्म-भूमि की जय।

सब : महाराणा प्रताप की जय।
मेवाड़ की जय।
भारत माता की जय।

भामाशाह : महामहिम महाराणा, अग्रजानुजो और मित्रो!
महाराणा* के व्यक्तित्व की महत्ता किसी से छिपी नहीं। उनका साहस, शौर्य और पराक्रम अनुपमेय है और उनकी वीरता, शक्ति, सज्जनता, उदारता और मित्र-वत्सलता अतुलनीय। उनका स्वाभिमान, सर्वधर्म समभाव, कुल-गौरव और स्वातन्त्र्य-प्रेम अभूतपूर्व है और उनका मानवता-प्रेम, शान्ति-सद्भाव एवं कूटनीतिक वाक्चातुर्य आश्चर्योत्पादक। सिसोदिया वंश के वे कुल-गौरव है और मेवाड़ के स्वाभिमान-मार्त्तण्ड। हम सभी उन्हें पाकर धन्य हैं और उनके आदर्शों के लिए मर मिटने को तत्पर। उनके आदर्शों की महत्ता का प्रकाश संसार का अज्ञानान्धकार दूर करे, उनके यश की सुगन्ध दिग्दिगन्त में परिव्याप्त हो और उनकी जय-जयकार से समग्र संसार गुंजायमान हो।

सब : स्वनामधन्य महाराणा प्रताप की जय। मेवाड़ की जय। जननी जन्मभूमि की जय। भारत माता की जय।

हकीम ख़ाँ सूर: मेवाड़ के जन-गण और मन के प्रिय महाराणा!
आप का प्रताप दिन दूना, रात चौगुना बढ़े; आप की कीर्त्ती-पताका समग्र संसार में फहरे। आपको पाकर हम धन्य हैं, मेवाड़ धन्य है, भारतमाता धन्य है और जननी जन्मभूमि कृतकृत्य। आप के आदर्शों की महत्ता और धर्म-निरपेक्षता पर हमें फ़ख्र है, आपका कोई दूसरा सानी नहीं। आप की जय हो, जय हो, जय हो।

सब : स्वनामधन्य महाराणा प्रताप की जय। मेवाड़ की जय। भारत माता की जय।

झाला बीदा : स्वाभिमान-मार्त्तण्ड महामहिम महाराणा!
आपको मेवाड़ के इस गौरवशाली राजसिंहासन पर अधिष्ठित देखकर मेरा रोम-रोम आनन्द-गद्‌गद है। आप की वीरता जग-विख्यात है; आप की मित्र-वत्सलता की कोई उपमा नहीं। आपकी कीर्त्ती की धवलता दिग्दिगन्त में प्रसरित हो; आपके यश की सुरभि से सारा संसार सौरभित हो; आप की जय-जयकार से समस्त संसार गुंजायमान हो; आपकी यशोगाथा इतिहास की ऐसी अमृत-गाथा बने जिसका पारायण करके मृत प्राणी भी जीवित हो उठें। हम सब आपके साथ-हैं। आपके प्रस्वेद की एक-एक बूँद के लिए हम अपना रक्त बहा देंगे; आपके एक-एक बूँद रक्त की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बाज़ी लगा देंगे; स्वराज्य की, जन्म-भूमि की एक-एक इंच भूमि की रक्षा के लिए अपना जीवन होम देंगे। हम सब इसके लिए कृत-संकल्प हैं, यह हमारी अटल प्रतिज्ञा है। आप की जय हो, जय हो, जय हो और आप की जय में सारा संसार लय।

प्रताप : सम्मान्य राजाओ, सामन्तो, सभासदो एवं साथियो!
आप लोगों ने मेरी प्रशंसा के पुल बाँध-बाँध कर मुझे इतना ऊँचा उठा दिया कि मैं अपने महत्त्व के आकाश में उड़ने लगा। किन्तु भला मैं नाचीज़ इस प्रशंसा का पात्र कहाँ? वस्तुतः, यह सब आपके औदार्य एवं स्वाभिमान, स्वातन्त्र्य, जन्मभूमि एवं मेरे प्रति प्रगाढ़ प्रेम का परिणाम है जो आपने मुझ अकिंचन को एक देवता बना दिया। परमात्मा मुझे आपके इस अप्रतिम विश्वास के योग्य प्रमाणित करे, यही उससे मेरी प्रार्थना है। अपनी ओर से भी, मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि जन्मभूमि मेवाड़ की गौरव-रक्षा और स्वतन्त्रता के लिए मैं न केवल सदैव सन्नद्ध रहूँगा प्रत्युत आवश्यकता पड़ने पर अपने प्राणों की भी आहुति दे दूँगा। संसार की कोई भी शक्ति इसमें बाधक नहीं हो सकती; ऐश्वर्य-वैभव अथवा पार्थिव समृद्धि का कोई भी प्रलोभन इसमें आड़े नहीं आ सकता। यह मेरी अटल प्रतिज्ञा है और इसकी पूर्ति ही मेरे जीवन का चरम लक्ष्य। आप सबका सहयोग इसके लिए वांछित है और मुझे विश्वास है कि वह सदा-सर्वदा आपसे मिलता रहेगा। जय-हिन्द। जये मेवाड़।

सब : महाराणा प्रताप की जय। मेवाड़ की जय।
भारत माता की जय।

[महाराणा प्रताप अपना स्थान ग्रहण करते हैं। आकाश उनकी जय-जयकार की ध्वनि से गुंजायमान हो उठता है। तभी, ताल-वाद्य पर थिरकती सुन्दरियाँ आकर नृत्य-गीत प्रस्तुत करती हैं।]

स्वतन्त्रते ! मंगल-विधायिनी।
स्वतन्त्रते ! जीवन-पदायिनी।
जन-गंगा की विमल विकासिनि,
सुख-समृद्धि-सन्तोष दायिनी।
कोटि-कोटि शिशु प्रमुदित मन हो,
करें प्रणाम सश्रद्ध मगन हो।
विघ्न-विनाशिनि, आशु प्रसादिनि,
जग-जननी, तव कीरति घन हो।
तामस-भंजिनि, सत्त्व-विवर्द्धिनि,
मानवता की मुक्ति दायिनी। स्वतन्त्रते ! मंगल···।
मातृ-भूमि की पीर-निवारिणि,
जन-मन के दुःख दारुण हारिणि !
भव-अज्ञान-तमिस्र-विदारिणि।
ज्ञान-प्रकाश विकीरण कारिणि।
अखिल भुवन अनुरंजन कारिणि।
जयति, जयति, जय-स्वर-निनादिनी !
स्वतन्त्रते ! मंगल-विधायिनी।
स्वतन्त्रते ! जीवन प्रदायिनी।

सब : स्वतन्त्रता देवी की जय।
मातृभूमि की जय। भारत माता की जय।
महाराणा की जय।

[जय-जयकार की तुमुल ध्वनि के साथ नेपथ्य में एक दिव्य प्रकाश के मध्य त्रिशूल-पाणि भगवान् शंकर विराजमान हैं। सब चौंककर उन्हें देखते और प्रणाम करते हैं।]

परदा गिरता है।

मानसिंह : किन्तु महाराणा ! मेरे सम्बन्धों का सूत्र इतना मज़बूत एवं दृढ़ है कि उसे कोई तोड़

द्वितीय अंक

30

मानसिंह : विश्वास कीजिए महाराणा ! शहंशाह अकबर आप के बड़े प्रशंसक हैं। उनकी दृष्टि में आप की कोई उपमा नहीं—आप का स्थान अन्यतम है। इसीलिए वे आप से मैत्री-स्थापन के लिए आतुर हैं और यही कारण है कि उन्होंने मुझे आप के पास भेजा है।

प्रताप : तो आप को विश्वास है कि मैं आप की बात मानकर अपने संकल्प से डिग जाऊँगा?

मानसिंह : विश्वास न भी हो तो भी प्रयत्न तो करना ही है। यों भी व्यक्ति को कर्म करने का ही अधिकार है, फल का नहीं—"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्।"

प्रताप : मैं जानता हूँ कि अकबर का मेरे साथ मैत्री-स्थापन का क्या उद्देश्य है। मुझे उसकी मैत्री की आवश्यकता नहीं।

मानसिंह : नहीं, महाराणा ! आप बादशाह अकबर की मैत्री का उद्देश्य समझे नहीं।

प्रताप : तो फिर आप ही समझाइए उसकी मैत्री का उद्देश्य।

मानसिंह : आप अन्यतम पराक्रमी, वीर एवं साहसी शासक हैं। अतः आपको अपने सहायक मित्र के रूप में पाकर बादशाह अकबर स्वयं को कृतकृत्य समझेगा। आप को अपने गौरवास्पद मित्र के रूप में पाकर उसका जीवन धन्य हो जायगा। विश्वास न हो तो यह लीजिए शहंशाह अकबर का पत्र। (मानसिंह प्रताप को अकबर का पत्र देता है।)

प्रताप : (पत्र पढ़कर) राजनीति में धूर्तता के लिए बहुत स्थान है। अच्छा-बुरा उसमें सब कुछ जायज़ है, उचित है। उसके शब्द शतरंज की ऐसी गोटें हैं जिनका प्रयोग हर व्यक्ति के वश की बात नहीं।

मानसिंह : तो क्या इसमें आप को कोई संदेह है?

प्रताप : संदेह ही नहीं, बहुत बड़ा संदेह है।

मानसिंह : कारण?

प्रताप : कारण यही कि अकबर बहुत बड़ा कूटनीतिज्ञ है। उसकी राजनीति के मोहरे बड़े-बड़े शातिर खिलाड़ियों को भी हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाने के लिए विवश कर देते

हैं। पर आप मुक्त हैं, स्वाधीन हैं, स्वतन्त्र हैं। आप के सिर पर मेवाड़ का मुकुट ही नहीं, स्वाभिमान और स्वतंत्रता का भी सेहरा है।

प्रताप : मैं जानता हूँ : आप दरबारी शिष्टाचार में दक्ष हैं। पर इतनी प्रशंसा के पुल न बाँधिए कि मैं आकाश में उड़ने लगूँ।

मानसिंह : आपकी प्रशंसा मैं ही क्या, सारा संसार करता है। यही क्या, लोग आप की पूजा करते हैं। आपकी नैतिकता, उदारता और सज्जनता; आपकी शक्ति, साहस और दृढ़ता; आपका पराक्रम, शौर्य और स्वाभिमान; आपका मातृभूमि-प्रेम, देश-प्रेम और स्वतन्त्रताऽनुराग और आपकी अखंड राजपूती आन-बान और शान आदि गुण आपके मित्र-शत्रु और मध्यस्थ सब के लिए आश्चर्य के विषय हैं।

प्रताप : लगता है आपके अन्तःकरण में आत्मीयता का कोई तार झनाझना उठा है; राजपूती रक्त, भ्रातृभाव, आन-बान और शान अथवः भारतीयता एवं तज्जन्य संस्कारों की पावन अन्तःसलिला प्रवहमान हो उठी है। यदि ऐसा है तो आइए : हम सब मातृभूमि पर मर-मिटने के लिए कटिबद्ध हो जाएँ, संकल्प करें कि मातृभूमि की मर्यादा और राजपूती रक्त के लिए कटिबद्ध हो जाएँ, संकल्प करें कि मातृभूमि की मर्यादा और राजपूती रक्त की पवित्रता अक्षुण्ण रखेंगे।

मानसिंह : (सचेत-से होते हुए) नहीं, महाराणा! यह मेरा सौभाग्य कहाँ?

प्रताप : भाग्य तो व्यक्ति स्वयं अपने कर्मों से बनाता है। आप भी बनाइए। भारत माता को आप जैसे नरसिंह से बड़ी आशा है। आप जैसे वीर पुत्र की, आत्म-रक्षा के लिए उसे, बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा है।

मानसिंह : किन्तु महाराणा! मेरा भाग्य बंध गया है शहंशाह अकबर से। यह फ़र्ज़न्द उपाधिधारी मानसिंह अब उन्हीं के अपने वत्स जैसा है। अब उन्हें छोड़ना सम्भव नहीं।

प्रताप : संसार में कुछ भी असम्भव नहीं, सब कुछ सम्भव है। किन्तु यह व्यक्ति के संकल्प की दृढ़ता पर निर्भर है कि वह असम्भव को सम्भव बना पाता है, या नहीं।

मानसिंह : किन्तु महाराणा! मेरे सम्बन्धों का सूत्र इतना मज़बूत एवं दृढ़ है कि उसे कोई तोड़ नहीं सकता। मैं राजनीति के दलदल में इतना धँस गया हूँ कि लाख प्रयत्न करके भी उसमें से निकल नहीं सकता।

प्रताप : तो फिर आइए मुख्य बात पर, जिसके लिए आप ने यहाँ आने का कष्ट किया।

मानसिंह : विश्वास कीजिए महाराणा ! शहंशाह अकबर आप के बड़े प्रशंसक हैं। उनकी दृष्टि में आप की कोई उपमा नहीं—आप का स्थान अन्यतम है। इसीलिए वे आप से मैत्री-स्थापन के लिए आतुर हैं और यही कारण है कि उन्होंने मुझे आप के पास भेजा है।

प्रताप : तो आप को विश्वास है कि मैं आप की बात मानकर अपने संकल्प से डिग जाऊँगा?

मानसिंह : विश्वास न भी हो तो भी प्रयत्न तो करना ही है। यों भी व्यक्ति को कर्म करने का ही अधिकार है, फल का नहीं—"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्।"

प्रताप : मैं जानता हूँ कि अकबर का मेरे साथ मैत्री-स्थापन का क्या उद्देश्य है। मुझे उसकी मैत्री की आवश्यकता नहीं।

मानसिंह : नहीं, महाराणा ! आप बादशाह अकबर की मैत्री का उद्देश्य समझे नहीं।

प्रताप : तो फिर आप ही समझाइए उसकी मैत्री का उद्देश्य।

मानसिंह : आप अन्यतम पराक्रमी, वीर एवं साहसी शासक हैं। अत: आपको अपने सहायक मित्र के रूप में पाकर बादशाह अकबर स्वयं को कृतकृत्य समझेगा। आप को अपने गौरवास्पद मित्र के रूप में पाकर उसका जीवन धन्य हो जायगा। विश्वास न हो तो यह लीजिए शहंशाह अकबर का पत्र। (मानसिंह प्रताप को अकबर का पत्र देता है।)

प्रताप : (पत्र पढ़कर) राजनीति में धूर्तता के लिए बहुत स्थान है। अच्छा-बुरा उसमें सब कुछ जायज़ है, उचित है। उसके शब्द शतरंज की ऐसी गोटें है जिनका प्रयोग हर व्यक्ति के वश की बात नहीं।

मानसिंह : तो क्या इसमें आप को कोई संदेह है?

प्रताप : संदेह ही नहीं, बहुत बड़ा संदेह है।

मानसिंह : कारण?

प्रताप : कारण यही कि अकबर बहुत बड़ा कूटनीतिज्ञ है। उसकी राजनीति के मोहरे बड़े-बड़े शातिर खिलाड़ियों को भी हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाने के लिए विवश कर देते हैं; उसकी कूटनीतिक चालें राजनीति के बड़े-बड़े महारथियों को भी चारों ख़ाने चित कर देती हैं।

मानसिंह : प्रमाण, महाराणा ! इसका कोई प्रमाण आप के पास है?

प्रताप : प्रत्यक्षं प्रमाणं किम्—प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की आवश्यकता क्या? राजपूत का राजपूत के विरुद्ध उपयोग किस कूटनीतिक चाल से कम है?

मानसिंह : नहीं, महाराणा! इसमें कोई कूटनीति नहीं। यह तो उसकी बुद्धिमत्ता का द्योतक है। अपनों का अपनों पर अधिक प्रभाव पड़ सकता है। राजपूत को राजपूत की बात अधिक मान्य प्रतीत हो सकती है।

प्रताप : किन्तु यदि मान्य न हो तो?

मानसिंह : तो क्या? फिर कोई दूसरा प्रयास।

प्रताप : नहीं, कुँवर! राजपूत की बात यदि राजपूत न माने तो दोनों एक-दूसरे के प्राणलेवा शत्रु हो जाते हैं। किन्तु बादशाह को क्या? उसकी तो दोनों ओर से पौ बारह। मरें तो राजपूत पर यदि जीते तो बादशाह अकबर। हानि कुछ भी नहीं किन्तु विजय बादशाह की। हर्रा लगे न फ़िटकरी, रंग चोखा निकले।

मानसिंह : तो फिर क्या समझूं आप का उत्तर।

प्रताप : मैं शाही कूटनीति के दाँव-पेच अच्छी तरह समझता हूँ। किन्तु आप निराश न हों कुँवर! मैं वचन तो नहीं देता पर आपके प्रस्ताव पर विचार अवश्य करूँगा।

मानसिंह : तो फिर आज्ञा दीजिए महाराणा!

[मानसिंह उठकर खड़े हो जाते हैं। प्रताप उन्हें सस्नेह विदा करते हैं। तभी, एक सुरम्य आलोक फैलता है।]

परदा गिरता है।

द्वितीय दृश्य

स्थान : उदयसागर की पाल

समय : अपराह्न

[बादशाह अकबर के राजनीतिक प्रतिनिधि 23 वर्षीय कछवाहा राजवंशी कुँवर मानसिंह के साथ मेवाड़ाधिपति महाराणा प्रताप की मैत्री-समझौता-वार्ता हो चुकी है। मानसिंह के आतिथ्य सत्कार एवं विदाई-भोज हेतु उदयसागर की पाल पर महाराणा की ओर से 14 वर्षीय कुँवर अमरसिंह के नेतृत्व एवं निर्देशन में एक भव्य आयोजन किया गया है। मानसिंह अपने साथी अधिकारियों एवं सैनिकों के साथ आते हैं। प्रधानमंत्री रामा महासानी, सामन्त भीमसिंह डोडिया, भामाशाह, ताराचंद तथा ग्वालियर नरेश रामसिंह तोमर और उनके पुत्र शालिवाहन एवं भवानीसिंह अमरसिंह के साथ मानसिंह की अगवानी करते हैं। किन्तु मानसिंह महाराणा को न देखकर आश्चर्य-चकित हैं।]

मानसिंह : महाराणा कहाँ हैं? उनके बिना यह समस्त आयोजन फीका है। उन्हें मेरा नमस्कार निवेदित कीजिए।

अमरसिंह : दा जी अस्वस्थ हैं। इसीलिए उन्होंने मुझे आप के आतिथ्य-सत्कार हेतु भेजा है। आज्ञा दीजिए। सेवक प्रस्तुत है।

मानसिंह : आश्चर्य है। मैत्री-वार्ता के समय तो महाराणा पूर्णतः स्वस्थ थे।

भीमसिंह : भीषण उदर-व्याधि ने घेर लिया। मस्तिष्क-पीड़ा भी कुछ कम नहीं। मानसिक रूप से भी वे किंचित् अस्वस्थ हैं।

मानसिंह : तो फिर क्यों न हम लोग उनके पास जाकर उनका हाल पूछें?

अमरसिंह : वैद्यराज ने कहा—उन्हें विश्राम की आवश्यकता है। उसमें किसी प्रकार का विघ्न-व्यवधान उनके स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है।

मानसिंह : अच्छा, मैं समझ गया। राजनीतिक प्रतिनिधि हूँ शत्रु का—अकबर बादशाह का, सेवक-सम्बन्धी हूँ, कनिष्ठ हूँ। कैसे करेंगे साथ भोजन वे मेरे? भूपति हैं, मेवाड़ाधिपति हैं पूज्यपाद महाराणा और अस्वस्थ हैं।

रामा महासानी : नहीं, कुँवर! और कोई बात नहीं। महाराणा पीड़ित हैं, भीषण उदर-व्याधि से।

दूत : (तीव्र गति से आता हुआ) महाराणा आने में अक्षम-असमर्थ हैं;
पीड़ित अस्वस्थ हैं;
भोजन करें आप सब;
भेजा सन्देश है उन्होंने यह।

मानसिंह : तो फिर अपेक्षित उपचार है
ख्यातनामा वैद्यों-हकीमों का।
सेना सहित लाना पड़ेगा उन्हें दिल्ली से।

भीमसिंह : बड़ा उपकार होगा आपका। सेना सहित आइए और अपने फूफा अकबर को भी लाइए।

मानसिंह : छोड़ दो कुत्तों को खीर और ख़ाने पर। फेंक दो थालियाँ और ख़ाना। (कुत्ते खीर पर झपटते और पेट भर खाते हैं।)

अमरसिंह! : आपके सेवकों को कष्ट करने की आवश्यकता नहीं। ख़ाना बनवाने का कार्य मेरा था और उसके फिंकवाने का कार्य भी मेरा ही है, आपके सेवकों का नहीं।

[उत्तेजित मानसिंह अपने साथियों और सैनिकों के साथ जाता है। आकाश में बिजली कड़कती है, कौंधा लपकता है। अमरसिंह और उसके साथी ख़ाना झील में फिंकवा देते हैं और स्थान शुद्ध करने के लिए उसे गंगाजल से धोने और गोबर से लीपने का आदेश देते हैं।]

परदा गिरता है।

तृतीय दृश्य

स्थान : कुम्भलगढ़ का अजय दे आवास-खण्ड

समय : पूर्वाह्न

अजय दे : मेवाड़ पर संकट के बादल मँडरा रहे हैं। बादशाह अकबर का सेनापति मानसिंह आक्रमण के लिए एक विशाल वाहिनी लेकर आ गया है। साथ में हैं शहंशाह के विश्वासपात्र मुस्लिम सैन्य अधिकारी आसफ़ ख़ाँ, ग़ाज़ी ख़ाँ बदख़्शी, सैयद अहमद, हाशिम बरहा, सैयद राजू, मिहतर ख़ाँ, मुजाहिद बेग आदि।

शाम्भवी : तब तो साथ में राजपूत सैन्य अधिकारी भी कम न होंगे।

अजय दे : हाँ, यही तो अकबर की कूटनीति है। 'फूट डालो और राज करो' की नीति पर चलकर वह दोनों को प्रसन्न रखता है और दोनों को विभाजित करके उन पर राज करता है। विश्वास वह न तो अपने साथी मुस्लिम अधिकारियों का पूर्णतः करता है और न राजपूत सेनापतियों अथवा सैन्य अधिकारियों का।

विजया : किन्तु अभी तो आप मानसिंह के साथ आए मुस्लिम सैन्य अधिकारियों को उसका विश्वासपात्र बता रही थीं।

अजय दे : बता रही थी पर उसका आशय मात्र यह था कि मुस्लिम सैन्य अधिकारियों पर उसे अपेक्षाकृत अधिक विश्वास है।

रागिनी : किन्तु यदि ऐसा होता तो वह किसी विश्वासपात्र मुस्लिम सेनापति को मेवाड़ पर आक्रमण करने के लिए भेजता।

अजय दे : भेज सकता था। किन्तु···

अंजना : किन्तु क्या महारानी ! आप कहते-कहते रुक क्यों गईं ?

अजय दे : इसलिए कि तुम लोग भी अपनी बुद्धि पर कुछ बल दो।

अंजना : समझ गई, महारानी ! सब समझ गई।

अजय दे : क्या ? क्या समझ गईं अंजना देवी ? कुछ औरों को भी तो समझाइए।

अंजना : यही कि मानसिंह अकबर का सम्बन्धी है, फ़र्जन्द उपाधिधारी बेटा है, वीर-भूमि में जन्मा राजपूत है, आमेर राज्य का युवराज है और अग्रणी वीर योद्धा एवं सेनापति है।

विजया : मेवाड़ के लिए अकबर का मैत्री-प्रस्ताव भी वही लाया था और मेवाड़ में किए गए अपमान के घाव का दुःख भी उसी ने झेला। यही नहीं, मेवाड़ के प्रति कटुता, शत्रुता, विद्वेष एवं वैमनस्य के दुर्भाव भी सम्प्रति, उसी में सर्वाधिक हैं। अतः 'फूट डालो और राज करो' के सिद्धान्त की दृष्टि से भाई-भाई को एक-दूसरे के विरुद्ध खड़े करने के उद्देश्य से सर्वाधिक उपयुक्त पात्र मानसिंह ही है। उसके अतिरिक्त किसी अन्य को भेजने से उसके वांछित उद्देश्य की पूर्ति होती ही नहीं।

अजय दे : हाँ, तो ठीक समझीं तुम अकबर का उद्देश्य। किन्तु···

शाम्भवी : किन्तु क्या, महारानी?

अजय दे : यही कि अब हमारे लिए करणीय क्या है?

विजया : करणीय तो आप निश्चित करेंगी, महारानी! हम आप से भिन्न नहीं, हर स्थिति में आप के साथ हैं।

शाम्भवी : हाँ, आप जो भी करना चाहें, करें। आप हमें सदैव अपने साथ पाएँगी। जीने-मरने की हमें चिन्ता नहीं। हमारे प्राण आप पर न्योछावर हैं। हमें तो मात्र आप की आज्ञा की प्रतीक्षा है, मात्र आप का संकेत पर्याप्त है।

अजय दे : एक बात समझ लो : मैं उन नारियों में से नहीं हूँ जो पति को रण-क्षेत्र में भेजकर उसकी विजय-पराजय की प्रतीक्षा करती हैं; उसकी अनुपस्थिति में घर में हाथ-पर-हाथ धरे बैठी रहती हैं; मात्र परमात्मा से उसकी विजय की प्रार्थना करके, अपने कर्त्तव्य की इति-श्री समझ लेती हैं और पति की पराजय अथवा उसके जौहर की स्थिति में, वीर-गति पाने पर उसके शव के साथ चिंता पर भस्म हो जाती हैं। मैं तो पति के साथ सहयोग करके, उसके कन्धे-से-कन्धा भिड़ा कर युद्ध करने में विश्वास करती हूँ। किन्तु मेरा पति इसमें विश्वास नहीं करता, मुझे ऐसा करने की आज्ञा नहीं देता।

विजया : तो फिर और क्या मार्ग है, महारानी?

अजय दे : देखना है, कौन-सा मार्ग उचित होगा।

[तभी महाराणा प्रताप युद्ध की वेश-भूषा में आते दृष्टिगत होते हैं। अजय दे की सखियाँ एक ओर चली जाती हैं। दासी उसे आरती का थाल देती है। अजय दे प्रताप की आरती करके उसे एक खड्ग भेंट करती है। प्रताप उसका मस्तक चूम कर, उसकी मंगल-कामनाओं के साथ युद्ध के लिए प्रस्थान करते हैं। तभी बाहर रण-वाद्यों की ध्वनि पर सशस्त्र वीर-बालाओं का यह गीत सुनाई पड़ता है]

न धूर्तता करे कोई; स्वतन्त्रता हरे कोई।
न क्रूरता करे कोई; न शत्रुता वरे कोई।
न अतिक्रमण करे कोई; न दिग्भ्रमित रहे कोई।
न जीव-धन हरे कोई; न मृत्यु-मुख परे कोई।
नहीं यहाँ शृगाल हैं; नृसिंह वीर-बाल हैं।
प्रचण्ड क्रूर काल हैं; ज्वलन्त अग्नि-ज्वाल हैं।
अमर्त्य वीर-पुत्र हम, महान शक्ति-साल हैं।
प्रचण्ड रौद्र-रूप में, कराल काल-व्याल हैं।

[गीत समाप्त होते ही एक सुरम्य इन्द्रधनुषी आलोक के साथ]

परदा गिरता है।

चतुर्थ दृश्य

स्थान : गोगूँदा राजमहल का दरबार

समय : पूर्वाह्न

प्रताप : साथियो ! बादशाह अकबर के विश्वासपात्र एवं सम्बन्धी फ़र्ज़न्द उपाधिधारी कछवाहा कुमार मानसिंह से आप परिचित हैं। शहंशाह के वे सम्बन्धी हैं; अतः स्वभावतः मेवाड़ के वे शत्रु हैं। स्वजातीय होते हुए भी वे विजातीय सम्बन्धों के जाल में फँसे हैं; अतः आत्मीयों के सर्वनाश के लिए कटिबद्ध हैं; स्वयं भी विदेशी आक्रान्ताओं की दासता की बेड़ियों में जकड़े हैं और हमें भी जकड़ देना चाहते हैं।

भीमसिंह डोडिया : वह कुछ नहीं कर सकता, महाराणा ! आप निश्चिन्त रहें। हमने उसे पहले भी ऐसा जवाब दिया था कि बेचारा शर्म से पानी-पानी हो गया था और अब भी ऐसा मुँह तोड़ जवाब देंगे कि वह कभी भूलेगा नहीं।

रामसिंह : हाँ, भीमसिंह ! यह तुम्हारे ही कर्मों का फल है कि बात यहाँ तक आ पहुँची। महाराणा ने तो उसके सन्धि-प्रस्तावों को बड़े धैर्यपूर्वक सुनकर ऐसी राजनीतिक सूझ-बूझ का परिचय दिया, ऐसी कूटनीतिक दक्षता प्रदर्शित की कि वह दंग रह गया। आतिथ्यसत्कार में भी उनकी ओर से कोई कमी न थी पर तुमने सब गुड़गोबर कर दिया।

भामाशाह : ऐसे व्यंग्य-बाण छोड़े कि वह जल-भुन कर ख़ाक हो गया।

अमरसिंह : हाँ, दा जी ! मेवाड़ के प्रति शत्रुता की गाँठ तो उसने तभी बाँध ली थी और

प्रताप : अब अवसर मिलते ही प्रतिशोध के लिए कमर कस कर आ गया।

शालिवाहन : तो क्या वह फिर यहाँ आ पहुँचा, महाराणा ?

प्रताप : आना ही था। वह तो मैंने उसे अपनी कूटनीति से कुछ समय के लिए टाल रखा था युद्ध की तैयारी के लिए। अकबर आकुल था सन्धि के लिए और वह भी अपनी शर्तों पर। किन्तु मैं इसके लिए सहमत न था। युद्ध अवश्यम्भावी थी। किन्तु मैंने तत्काल इसका अवसर न दिया। अपनी कूटनीतिक चातुरी से बादशाह अकबर को ऐसे भुलावे में रखा कि वह सन्धि के लिए दूत पर दूत भेजता रहा—पहले जलाल ख़ाँ कोर्ची को भेजा, तदुपरान्त मानसिंह को, तदनन्तर उसके पिता भगवन्तदास को और अन्ततः अपने दीवान टोडरमल को। पर मैं अपने संकल्प पर अडिग रहा। फलतः युद्ध-क्रीड़ा का यह मंगल-पर्व आ गया।

झाला बीदा : हाँ, स्वामी ! क्षत्रिय के लिए युद्ध एक मंगल-पर्व ही तो है विशेषकर जब वह अपनी जननी जन्मभूमि की रक्षा के लिए हो। वीर राजपूतों के लिए इससे अच्छा अवसर और क्या हो सकता है, महाराणा !

अमरसिंह : स्वागत है युद्ध-क्रीड़ा के इस मंगल-पर्व का। मन-मयूर नाच उठा युद्ध की मेघ-घटाओं को घिरते देखकर।

भीमसिंह : युद्ध में ऐसा पाठ पढ़ाऊँगा बच्चू को कि छठी का दूध याद आ जायगा।

[प्रतिहार का प्रवेश]

प्रतिहार : (प्रणाम करके) महाराणा ! गुप्तचर कोई विशेष सूचना देना चाहता है। आज्ञा हो तो उसे प्रस्तुत करूँ।

प्रताप : अवश्य। उसे तुरन्त भेजो।

प्रतिहार : हो आज्ञा। (जाता है। गुप्तचर का प्रवेश।)

गुप्तचर : महाराणा की जय हो।

प्रताप : क्या सूचना है गुप्तचर?

गुप्तचर : कछवाहा कुमार मानसिंह अपने वीर राजपूतों और विशाल शाही सेना के साथ मेवाड़ पर आक्रमण के लिए आ रहे हैं। उनके साथ हाथी, घोड़े, बन्दूकें और तोपें भी हैं।

प्रताप : और?

गुप्तचर : और यह कि कल प्रात: वे अपने एक सहस्र सैनिकों के साथ शिकार के बहाने खमनेर के दक्षिणी पहाड़ी प्रदेश का जायज़ा लेने यहीं पास के वन में आ रहे हैं।

प्रताप : और कुछ?

गुप्तचर : बस इतना ही निवेदन करना था स्वामी ! अब आज्ञा चाहता हूँ।

प्रताप : आज्ञा है। जाओ। शत्रु की गतिविधियों पर सूक्ष्म दृष्टि रखो और आवश्यक हो तो तुरन्त सूचना दो।

दूत : जो आज्ञा। (ज़मीन तक झुक कर प्रणाम करके जाता है।)

कृष्णदास : राजनीति तो यही कहती है कि शिकार के समय ही मानसिंह पर आक्रमण करके उसका और उसके साथियों का काम तमाम कर दिया जाय। फिर तो न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। सेना बिना कर्णधार के नाव के समान परिस्थितियों की मंझधार में डूब जायगी, बिना सिर के शव के समान स्वतनष्ट हो जाएगी।

हकीम ख़ाँ : हाँ, महाराणा ! बात तो बहुत पते की है। प्रेम और युद्ध में सब कुछ जायज़ है।

रामसिंह : हाँ, राजन्! जो इस बात को भुला दे कि वह स्वजातीय है, आत्मीय है, रक्त की एकता के सूत्र में आबद्ध राजपूत क्षत्रिय भाई है, वह शत्रु से भी गया बीता विश्वासघाती है। उसे किसी भी प्रकार मारने, नष्ट करने अथवा ठिकाने लगाने में कोई अनौचित्य नहीं। भगवान् कृष्ण के कर्तृत्त्व के उदाहरण हमारे सामने हैं। उनका औचित्य बहुत स्पष्ट है।

ताराचन्द : हाँ, महाराणा ! ऐसे शत्रु को अवसर पाकर भी छोड़ देना महाभयंकर विषधर को अभयदान देना है। राजनीति में ऐसे औदार्य के लिए कोई स्थान नहीं। ऐसे अजगर को छोड़ कर हम ख़तरा ही मोल लेंगे।

झाला बीदा : नहीं, स्वामी ! मैं ऐसी राजनीतिक सूझ-बूझ का पक्षधर नहीं। मुझे ऐसी राजनीतिक परिपक्वता नहीं चाहिए जो क्षत्रियत्व के लिए एक कलंक हो, वीर को कायर बना दे, पाप की खाई में ढकेल कर उसके वीरतापूर्ण कृत्यों के दिव्य यश की धवलिमा पर कालिख पोत दे।

अमरसिंह : हाँ, दा जी ! मैं झाला बीदा की बात से सहमत हूँ।

भामाशाह : हाँ, महाराणा ! जहाँ ऐसे वीर हो, वहाँ मातृभूमि मेवाड़ पर कोई आँच नहीं आ सकती। जननी जन्मभूमि की रक्षा एवं उत्कर्ष के लिए हम सब कुछ होम देंगे।

शालिवाहन : मातृभूमि पर मेरे प्राण न्योछावर हैं।

भवानीसिंह : मैं भी वीर-कर्म पर अपने सहस्रों जीवन न्योछावर करने के लिए तत्पर हूँ।

प्रताप : धन्य हो तुम लोग और धन्य हैं वे वीर-प्रसूता माताएँ जिन्होंने तुम्हें जन्म दिया। तुम्हें पाकर यह मातृभूमि कृतार्थ है, धन्य है और धन्य है, कृतार्थ है यह प्रताप जिसे तुम जैसे वीरों का सहयोग मिला। अब हमें कोई ऐसा कार्य करने की आवश्यकता नहीं जिससे हमारे यशशरीर पर कोई आँच आए, हमारे कर्तृत्त्व के औचित्य पर अँगुलियाँ उठें अथवा हमें अपने कृत्यों के औचित्य का उत्तर देना पड़े। जिस धरती पर ऐसे वीर हों, उसका पतन असम्भव है।

सब : महाराणा की जय। मातृभूमि की जय। मेवाड़ की जय। वीर भूमि की जय।

[जय-जयकार की ध्वनि से आकाश गूँज उठता है। बिजली कड़कती है। वीरांगनाएँ गैलरियों से पुष्प-वर्षा करती हैं और एक दिव्य आलोक के साथ]

परदा गिरता है।

पंचम दृश्य

स्थान हल्दीघाटी का रणक्षेत्र

समय : पूर्वाह्न

प्रताप : साथियो ! जननी जन्मभूमि का हम पर महान् ऋण है। उसने हमें जन्म दिया, रूप और शरीर दिया और हमारा पालन-पोषण किया। उसका ऋण चुकाने का इससे सुन्दर अवसर और कहाँ मिलेगा? उसके पंचतत्त्वों से निर्मित शरीर की सार्थकता इसी में है कि हम उसकी रक्षा के लिए मर मिटें, आक्रान्ता शत्रु को ऐसा पाठ पढ़ाएँ, उसके नहले पर ऐसा दहला लगाएँ कि उसे अपनी छठी का दूध याद आ जाए।

झाला बीदा : आप निश्चिन्त रहें, महाराणा ! शत्रु के चौकों पर हम ऐसे छक्के लगाएँगे कि मियाँ मानसिंह के होश फ़ाख्ता हो जाएँगे।

प्रताप : और जब मियाँ आसफ़ख़ा दुलत्ती झाड़ेंगे, तब?

झाला बीदा : टांगें खींचकर फेंक देंगे उन्हें उन पहाड़ियों के उस पार।

रामसिंह : नहीं, महाराणा ! परिहास का समय नहीं है यह।

प्रताप : परिहास ही तो है यह, राजन् ! युद्ध भी एक क्रीड़ा है। सच्चा वीर उसके लिए उसी प्रकार लालायित रहता है जैसे मयूर मेघ-घटाओं के लिए। आक्रान्ता शत्रु-सेना की बख़्तर बंद टुकड़ियों की श्यामल मेघ-घटाएँ जब उमड़ती हैं, उनके सैनिकों की रेल-पेल के साथ उनके गर्जन-तर्जन का जब मेघ-गर्जन होता है, तभी तो उनका सामना करने वाले रण-बाँकुरे वीरों के स्वाभिमान की विद्युत् कड़कती है, उनके उत्साह का कौंधा चमकता है और स्वाधीनता एवम् मंगल की ऐसी वर्षा होती है कि सारे दुःख और क्लेश बह जाते हैं।

रामसिंह : नहीं, महाराणा ! यह विपत्ति की घड़ी है, परिहास की नहीं। सम्प्रति, गम्भीरता और सतर्कता अपेक्षित है, परिहासपूर्ण असावधानी नहीं।

प्रताप : आप ठीक कहते हैं तात-श्री ! पर राजपूत के लिए रणांगण की क्रीड़ा ऐसी मदिरा है जिसे पीकर उसका रोम-रोम झूम उठता है। उसके युद्ध-कौशल, हस्त-लाघव एवं खड्ग-परीक्षण का ऐसा स्वर्णिम अवसर अन्यत्र कहाँ मिलता है? उसके साहस, शौर्य एवं पराक्रम का प्रदर्शन और कहाँ हो सकता है? तब फिर उसे आया देखकर वह अपने उल्लास को कैसे रोके?

रामसिंह : धन्य हैं महाराणा! आप सच्चे शौर्य-सिंह हैं, सच्चे राजपूत एवं सच्चे देशभक्त। वीरता आपकी रग-रग में हिलोरें लेती है, निर्भीकता आपको पाकर धन्य हो जाती है, पराक्रम आपको देखकर आश्चर्य-स्तब्ध हो उठता है और शक्ति और स्फूर्ति में आपकी कोई उपमा नहीं।

प्रताप : नहीं, राजन्! ऐसी प्रशंसा का मैं पात्र कहाँ? यह तो आपकी महत्ता है जो आप मुझे इतना महत्त्व देते हैं। आप हमारे पितृ-तुल्य हैं। आपका संकेत मात्र ही मेरे लिए आदेश है। आप निश्चिन्त रहें। युद्ध हम सब के लिए एक क्रीड़ा है। किन्तु आप द्वारा संकेतित सतर्कता एवं गम्भीरता पर भी हमारा बल कम नहीं और अब तो वह और भी अधिक रहेगा।

रामसिंह : मेवाड़ पर विपत्तियों के बादल मँडरा रहे हैं। इसलिए मेरे जैसे आपके शुभ-चिन्तकों की चिन्ता स्वाभाविक है।

प्रताप : मैं जानता हूँ। आप की चिन्ता अकारण नहीं। किन्तु आप जैसे कर्त्तव्यनिष्ठ वीर, शक्तिशाली एवं पराक्रमी देशभक्तों के रहते मेवाड़ का कोई अनिष्ट नहीं हो सकता।

रामसिंह : तथास्तु। ईश्वर आप की कामना पूर्ण करे।

प्रताप : साथियो! आप मेरी चिन्ता न करें। मैंन मानसिंह को, राजपूती स्वाभिमान को ठेस पहुँचाने के लिए अकेले ही ऐसा पाठ पढ़ाऊँगा कि श्रीमान् को छठी का दूध याद आ जाएगा; ऐसा दण्ड दूँगा कि वह सारे संसार के लिए एक सबक होगा।

झाला बीदा : नहीं, महाराणा! हम सब आपके साथ छाया बन कर रहेंगे। हम आपसे भिन्न नहीं, आप के अभिन्न अंग हैं। आप से पृथक् रहकर हमारा अस्तित्त्व कहाँ?

प्रताप : हाँ, झाला! अवश्य तुम सब मेरे अभिन्न अंग हो। तुम्हारी शक्ति ही मेरी शक्ति है। पर तुम मेरे अपने बाहु-बल पर विश्वास करो, इससे आश्वस्त रहो, इसका चमत्कार देखो—देखो कि मैं मानसिंह को, उनकी इस अवांछित कारगुज़ारी का, कैसा मुँह तोड़ जवाब देता हूँ।

झाला बीदा : विश्वस्त हूँ, महाराणा! मैं ही क्या, यह समस्त सैन्य दल विश्वस्त है आपके बाहु-बल से; आपके शौर्य, साहस, देश-प्रेम और पराक्रम से। शत्रु-दल भी आश्चर्याभिभूत और आतंकित है आपकी शक्ति की अग्नि ज्वाला से। देवता भी आनन्द-गद्‌गद हो पुष्प-वर्षा करते हैं आप की खड्ग-क्रीड़ा से चमत्कृत होकर; भगवान् महादेव भी

आश्चर्य-स्तब्ध रह जाते हैं आपके भीषण भाले की संहारशक्ति का साक्षात्कार करके। शत्रु-दल के शवों के ढेर लग जाते हैं आप की हुंकार मात्र से। किन्तु···

प्रताप : किन्तु क्या, झाला?

झाला बीदा : यही कि हमारा भी तो कुछ कर्त्तव्य है। अपने महाराणा की रक्षा में हम कोई प्रमाद नहीं कर सकते।

प्रताप : तो फिर कहना क्या चाहते हो तुम?

झाला बीदा : यही कि जब आप के सम्मान पर आने वाली कोई आँच मुझे सह्य नहीं, तो फिर आपके, कायर आक्रान्ताओं की तोपों की आग में, अकेले जाने से कैसे सहमत हो सकता हूँ मैं?

प्रताप : मैं कृतज्ञ हूँ तुम्हारे उस परामर्श के लिए, अन्यथा कल ही मानसिंह और उसके साथी अश्वारोहियों के शवों के ढेर लगा देता। तुम्हारे उस वीरोचित परामर्श पर मेरे प्राण न्योछावर हैं।

झाला बीदा : नहीं, स्वामी! यह तो मेरा कर्त्तव्य था, अन्यथा मैं अपने सम्मान्य वयोवृद्ध साथियों का विरोध क्यों करता?

प्रताप : कुछ भी हो। तुम्हारा परामर्श वीरोचित था। अत: स्वभावत: मुझे अच्छा लगा। किन्तु अब तुम, मेरे बाहु-बल में अविश्वास करके, मेरे वीर-कर्म में आड़े क्यों आते हो?

झाला बीदा : नहीं, स्वामी! कदापि नहीं। मैं आपके वीर-कर्म में कभी आड़े नहीं आ सकता। केवल मुझे आज्ञा चाहिए आपके साथ रहने की।

प्रताप : ऐसा ही होगा। तुम मेरे वाम पार्श्व में झाला मानसिंह, मानसिंह सोनगरा आदि योद्धाओं के साथ रहोगे।

झाला बीदा : कृतार्थ हुआ, स्वामी! अब आप सहर्ष आगे बढ़कर मानसिंह पर आक्रमण करें। किन्तु···

प्रताप : अब फिर किन्तु क्या, झाला?

झाला बीदा : यही कि मानसिंह यहाँ से कम-से-कम दो मील की दूरी पर है। बीच में उसकी विशाल वाहिनी है और फिर उसके अंगरक्षकों की विशेष टुकड़ी। जगन्नाथ कछवाहा

और उसकी राजपूत सेना उसके एक पार्श्व में है और मुस्लिम सैन्य अधिकारियों की सेना उसके दूसरे पार्श्व में।

प्रताप : तो क्या हुआ? इससे क्या अन्तर पड़ता है? मैं इन समस्त व्यवधानों को मिटा दूँगा। शत्रु-सेना के शवों के ढेर लगाता हुआ मैं मानसिंह के पास पहुँच जाऊँगा जैसे काल सहस्रों बाधाओं को पार करता हुआ अपने लक्ष्य के निकट पहुँच जाता है।

रामसिंह : किन्तु महाराणा! युद्ध-नीति का भी ध्यान रखना है।

प्रताप : अवश्य, राजन्! अवश्य।

रामसिंह : तो फिर आदेश दें, महाराणा!

प्रताप : सेना के अग्र भाग में हकीम ख़ाँ सूरी अपने अफ़गान सैनिकों और भीमसिंह डोडिया, रावत साँगा, रामदास मेड़तिया, कृष्णदास चूड़ावत आदि योद्धाओं एवं उनके सैनिकों के साथ रहेंगे; दक्षिण पार्श्व में आप स्वयं अपने तीनों पुत्रों और भामाशाह, ताराचन्द आदि योद्धाओं एवं उनके सैनिकों के साथ और वाम पार्श्व में झाला बीदा, झाला मानसिंह और मानसिंह सोनगरा अपने सैनिकों के साथ। मध्य भाग में मैं रहूँगा सेना के एक भाग के साथ।

सब : जो आज्ञा, महाराणा!

रामसिंह : अब आप अपने लक्ष्य की ओर बढ़ सकते हैं।

[प्रताप अपने साथियों को शत्रु-सेना पर आक्रमण के लिए आगे बढ़ने की आज्ञा देकर प्रचण्ड वेग से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। युद्ध-वाद्यों की तुमुल ध्वनि होती है।]

परदा गिरता है।

षष्ठ दृश्य

स्थान : हल्दीघाटी की पार्श्ववर्ती पहाड़ियाँ

समय : पूर्वाह्न

[महारानी अजय दे महिला सेना को उद्‌बोधित करती हुई]

अजय दे : जननी जन्मभूमि की उपासिकाओ ! राजस्थान की वीर-भूमि की मान-मर्यादा के लिए मर मिटने वाली स्वनाम धन्य महिलाओ ! ! भारत माता के इस नैसर्गिक दिव्य भू-भाग की, मेवाड़ की पवित्र धरित्री की, रक्षा के लिए कटिबद्ध देवियो ! ! ! हमें गर्व है तुम्हारी राष्ट्रभक्ति पर, तुम्हारे साहस, शौर्य और पराक्रम पर, तुम्हारे संकल्प की दृढ़ता पर। स्वर्ग में देवता भी आनन्द-गद्‌गद होंगे तुम्हें इस रूप में देखकर। जगदम्बा दुर्गा भी न्योछावर होंगी तुम्हारी कर्त्तव्य-निष्ठा पर, भगवान् एकलिंग भी नृत्य कर उठेंगे हर्षोन्मत्त हो तुम्हारे रणचण्डिका रूप का साक्षात्कार कर।

रागिनी : नहीं, महारानी ! ऐसी प्रशंसा की पात्र हम कहाँ ? हम तो तुच्छ सेविकाएँ हैं जननी जन्मभूमि की, मेवाड़ की पावन धरित्री की। हमारा कर्त्तव्य है कि हम इसकी रक्षा करें।

विजया : हाँ, राजेश्वरी ! हमारा जीवन और शरीर इसी प्राकृतिक परिवेश की देन हैं। हमारे शरीर का एक-एक अणु इसी पुण्य भूमि के पंच तत्त्वों से निर्मित है। इसके रेतीले और बंजर प्रदेश, सरिताएँ, सरोवर और झरने; पर्वत-श्रेणियाँ और उपत्यकाएँ, पगडण्डियाँ, दर्रे, नदी-नाले और कन्दराएँ हमारे शरीर और जीवन के आधार हैं। इनकी रक्षा में ही हमारी अपनी रक्षा है।

अंजना : हाँ, महादेवी ! इनकी रक्षा के लिए मर मिटें, इससे अधिक पुण्य कर्म और क्या होगा !

शाम्भवी : स्वतन्त्रता और स्वाभिमान की रक्षा के लिए मर मिटना ही दिव्य जीवन है; आत्म-सम्मान की बलिवेदी पर अपने जीवन का उत्सर्ग कर देना ही क्षत्रियोचित कर्म है।

चाँदनी : हाँ, हाँ। आदेश दें महारानी ! मेवाड़ की रक्षा के लिए हम सब प्राणपण से प्रस्तुत हैं।

अजय दे : तुम्हें पाकर मेवाड़ धन्य है। जिस प्रदेश में तुम जैसी वीरांगनाएँ हों, उसका पतन असम्भव है।

तेरा पालक संरक्षक जो। है विकट भटों का भक्षक जो।
जो महाकाल भैरव प्रचण्ड। जो मूर्तिमान भास्वर अखण्ड।
तू वाहन मात्र नहीं उनका। तू रक्षक दिग्दर्शक उनका।
उनकी कुँजी तेरे हाथों। उनकी महिमा तेरे हाथों।
हे महाप्रतापी वीर बंड। हे वीर भद्र चेतन प्रचण्ड।
तू शत्रु-चाल का भंजक है। हर कूटनीति का गंजक है।
तू हर कुचाल का मानदण्ड। तू हर कुचाल का मेरुदण्ड।
मेरे स्वामी के प्रिय तुरंग! हे स्वामिभक्ति के शिखर तुंग!

[गीत समाप्त होते ही एक इन्द्रधनुषी सुरम्य प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

सप्तम दृश्य

स्थान : हल्दीघाटी का रणक्षेत्र

समय : मध्याह्न

[शत्रु-सेना का संहार करते हुए प्रताप उसके सेनापति मानसिंह के सामने पहुँच जाते हैं। प्रताप का संकेत पाते ही चेतक कृतार्थ हो तीव्र गति से मानसिंह के हाथी की ओर बढ़ता है। साथ ही उनके विश्वस्त सैनिकों की टुकड़ी और झाला के सैनिक भी आगे बढ़ते हैं। पवन वेग से आगे बढ़कर भीम वेग से प्रताप अपना भाला सम्हाले मानसिंह पर आक्रमण करते हैं। चतुर्दिक् आतंक छा जाता है। शत्रु-सेना घबड़ा जाती है। प्रताप और उनके सैनिकों के सामने आने वाले शत्रुओं के ढेर लग जाते हैं। मानसिंह और उसके सैनिक-सहायकों से कुछ करते-धरते नहीं बनता। एक हाथ में खड्ग और दूसरे में भीषण भाला लिए, विकट रूपधारी प्रताप को भीम वेग से अपने आथी की ओर आते देखकर, मानसिंह को ऐसा लगता है मानो स्वयं भगवान् शंकर ही, उसकी करनी से क्रुद्ध-क्षुब्ध होकर, उसे अपने त्रिशूल का लक्ष्य बना कर दण्डित करना चाहते हों। परिणामत:, वह आतंकित होकर अंपने हाथी के हौदे में दुबक जाता है। सहसा चेतक उछल कर हाथी के मस्तक पर अपने पैर टेक देता है और प्रताप अपने भाले का वार मानसिंह पर करते हैं। किन्तु मानसिंह के हौदे में दुबक जाने के कारण, भाला हाथी के महावत को मारकर हौदे में जा लगता है। मानसिंह सुरक्षित बच जाता है। हाथी के मस्तक में बँधी विषैली तलवार से चेतक को भी आघात लगता है। किन्तु वह अपना धैर्य नहीं छोड़ता। मानसिंह का हाथी पीछे मुड़कर बहुत दूर चला जाता है। यही नहीं, उसकी सेना के भी पैर उखड़ जाते हैं और वह कई मील पीछे लौट जाती है। प्रताप, शत्रु-सेना का संहार करते हुए, मानसिंह पर आक्रमणार्थ पुन: आगे बढ़ते हैं। तभी झाला बीदा उनके निकट पहुँच कर उनसे प्रार्थना करते हुए कहता है।]

झाला बीदा : महाराणा! मानसिंह का हाथी पीछे लौट अवश्य गया है, मुग़ल-सेना भी पीछे दस मील दूर चली गई है। किन्तु पीछे से मेहतर ख़ाँ अपनी सैन्य टुकड़ी के साथ ढोल बजाता आ रहा है। "लौटो, लौटो, अंजाम सोचो, बादशाह सेना लेकर आ गया, बादशाह आ गया" की आवाज़ें आ रही हैं। मुग़ल सेना लौट रही है। मानसिंह उसके सुरक्षा घेरे में है। चेतक के पैर में विषैली तलवार का घाव है। इसलिए धैर्य से काम लें, राजनीति की गोटें फेंकें, कूटनीतिक युद्ध की शरण लें।

प्रताप : नहीं, झाला ! ऐसा नहीं हो सकता। शेर को सामने पाकर मैं उसे छोड़ नहीं सकता। सेनापति मानसिंह का अन्त निकट है। उसने राजपूती आन के साथ छल किया, विदेशी आक्रान्ताओं की—यवनों की, म्लेच्छों की—शरण ली। मेरा भाला उसके रक्त का प्यासा है।

झाला बीदा : नहीं, स्वामी ! नहीं।

प्रताप : क्यों झाला? रणक्षेत्र में ऐसी बात तुम्हारे जैसे वीर के मुख से शोभा नहीं देती।

झाला बीदा : नहीं, महाराणा ! नहीं। मेरी बात मानें। कूटनीतिक युद्ध की यही माँग है।

प्रताप : नहीं, झाला ! ऐसा कदापि न होगा। मानसिंह मेरा स्व-जातीय है, राजपूत क्षत्रिय है, वीर एवं पराक्रमी है और उसके प्रति मेरे मन के किसी कोने में स्नेह है। किन्तु मैं, उसकी करनी के लिए, उसे कभी क्षमा नहीं कर सकता।

झाला बीदा : तो फिर, महाराणा ! मैं आप से कुछ याचना करता हूँ।

प्रताप : याचना और इस समय? इस युद्ध-क्षेत्र में?

झाला बीदा : हाँ, महाराणा ! अभी, यहीं, इसी रणक्षेत्र में और इसी समय। आप ने कई बार प्रसन्न हो कर मुझ से कुछ माँगने के लिए कहा। पर मैंने आप से कभी कुछ नहीं माँगा। आज माँगता हूँ।

प्रताप : तो फिर माँगो। बोलो क्या चाहते हो?

झाला बीदा : आप का छत्र और आपके अखण्ड शरीर की रक्षा।

प्रताप : (दुःखी एवम् चिन्तित होकर मस्तक पर हाथ रखते हुए) ओह ! ऐसा धर्म-संकट और वह भी तुम्हारे जैसे वीर, स्वामिभक्त और पराक्रमी क्षत्रिय द्वारा जान-बूझकर उत्पन्न किया गया।

झाला बीदा : (साश्रु नेत्रों से) इसलिए महाराणा ! कि मेवाड़ को आप की आवश्यकता है; आवश्यकता ही नहीं, परम आवश्यकता। मेवाड़ के स्वाभिमान और स्वातन्त्र्य की रक्षा आप के बिना और कौन करेगा?

प्रताप : एवमस्तु। नियति की यदि यही इच्छा है तो फिर ऐसा ही हो।

[झाला बीदा को अपना राजकीय छत्र देकर प्रताप, अपने कतिपय साथी योद्धाओं के साथ, रणक्षेत्र से प्रस्थान करते हैं। चतुर्दिक् अंधकार छा जाता है।]

परदा गिरता है।

अष्टम दृश्य

स्थान : हल्दीघाटी का रणक्षेत्र

समय : अपराह्न

[महाराणा प्रताप और उनके साथी योद्धा शत्रु-सैनिकों को मार-काट कर उनके शवों के ढेर लगाते हुए एक ओर निकल जाते हैं। उधर सेनापति मानसिंह की सहायता के लिए, पीछे से मेहतर ख़ाँ अपनी सुरक्षित सेना लेकर आ जाता है और उसे चारों ओर से घेर कर, उसके चतुर्दिक् एक सुरक्षा-कवच बना लेता है। वह डंके की चोट पर यह घोषणा करता आया है कि बादशाह एक विशाल सेना लेकर आ गया है। भगोड़े सैनिक लौट आएँ, अन्यथा उनका अंजाम मौत से भी बदतर होगा। बादशाह के आने और उसकी चेतावनी की अफ़वाह चतुर्दिक् फैल जाती है। परिणामतः, भागे हुए सैनिक वापस लौट आते हैं और उनमें एक नया उत्साह आ जाता है। इधर झाला बीदा, महाराणा प्रताप का राजकीय छत्र धारण करके, स्वयं को महाराणा प्रताप घोषित करता हुआ, शाही सेना पर टूट पड़ता है। तभी शाही सेना चारों ओर से उसे घेर लेती है।]

आसफ़ ख़ाँ : घेर लो महाराणा को चारों ओर से। प्रहार करो।

झाला बीदा : अरे, भगोड़े! तू फिर आ गया। पहले दुम दबा कर भाग गया था। निर्लज्ज! शर्म व हया तूने सारी ताक पर रख दी है। कहाँ गया तेरा वह ग़ाज़ी ख़ाँ बदख़्शी, जो हमारी सेना के आक्रमण से आतंकित होकर, सबसे पहले दुम दबा कर भागा था यह कहते हुए कि "भीषण विपत्ति के समय भाग जाना पैग़म्बर की परम्परा है।"

आसफ़ ख़ाँ : हमें तुम से रणनीति नहीं सीखनी। हमारे शहंशाह अकबर दुनिया के सबसे बड़े कूटनीतिज्ञ एवं रणनीति-विशारद हैं।

झाला बीदा : तभी तो तुम ने बदायूनी को परामर्श देते हुए कहा था, "तुम तीर चलाते जाओ, चाहे जिस पक्ष के राजपूत मारे जाएँ, इस्लाम को तो उससे लाभ ही होगा।" क्या यही तुम्हारे शहंशाह अकबर की कूटनीतिक रणनीति है? धर्म-निरपेक्षता के आवरण में क्या वह इतना साम्प्रदायिक है?

हकीम ख़ाँ : नहीं, मुझे विश्वास नहीं होता। अकबर कभी ऐसा नहीं कर सकता। यह तो साम्प्रदायिकता के विष से बुझे उसके इन गुर्गों की ईजाद है।

ग़ाज़ी ख़ाँ : बन्द करो यह बकवास और हमारी तलवार का करिश्मा देखो।

झाला बीदा : अरे, निर्लज्ज भगोड़े! तू भी वापस आ गया। कायर! कापुरुष!! बहुत बड़ा तीस मार ख़ाँ था तो भाग क्यों गया था? रणक्षेत्र में ठहर जाता तो अब तक तो राजा रामसिंह तोमर, उसके पुत्रों और योद्धाओं ने तेरी चटनी बना दी होती।

[वाक्युद्ध समाप्त हो जाता है और दोनों ओर के योद्धा एक-दूसरे पर टूट पड़ते हैं। भीषण संग्राम होता है। झाला बीदा हाथी पर सवार आसफ़ ख़ाँ पर अपने भीषण भाले का वार करता है। किन्तु आसफ़ ख़ाँ हाथी के हौदे में दुबक जाता है। फिर भी, भाला उसके हाथ में लगता है और वह घायल हो जाता है। मेवाड़ी सेना के वीर योद्धा न जाने कितने मुग़ल सैनिकों एवं योद्धाओं को मौत की नींद सुला देते हैं। राजकीय छत्रधारी झाला न जाने कितने मुग़ल-सैनिकों एवं योद्धाओं के शवों के ढेर लगा देता है। तभी एक पार्श्व की पहाड़ियों से महारानी अजय दे की नारी सेना और दूसरे पार्श्व से भील सेना बाण-भालों और पत्थरों की वर्षा करके सहस्त्रों शत्रु-सैनिकों को मौत के घाट उतार देती है। घबरा कर शत्रु-सेना पीछे की ओर लौटती है। किन्तु अचानक राजकीय छत्रधारी झाला शत्रु की तोप के एक गोले का शिकार हो जाता है। फिर भी, वह परमवीर योद्धा उछलकर न जाने कितने शत्रुओं को धराशायी कर देता है। देवता आकाश से पुष्प-वर्षा करते हैं। अप्सराएँ हाथ में पुष्पमालाएँ लेकर उसके स्वागत की प्रतीक्षा करती हैं। तभी, एक दिव्य इन्द्रधनुषी आलोक के साथ]

परदा गिरता है।

तृतीय अंक

प्रथम दृश्य

स्थान : आवरगढ़

समय : अपराह्न

[महाराणा प्रताप अपने सामन्त योद्धओं एवं सैनिकों के साथ बैठे भावी रणनीति की योजना बनाते हुए]

प्रताप : मानसिंह गोगूँदा पहुँच गया है किन्तु वह हमारे भय से संत्रस्त है। हमारे आक्रमण से बचने के लिए उसने गोगूँदा की गलियों में ऊँची-ऊँची दीवारें खड़ी करवा ली हैं, नगर के चारों ओर गहरी-गहरी खाइयाँ खुदवा ली हैं और स्वयं को गोगूँदा में बंद कर लिया है। किन्तु हमने गोगूँदा जाने वाले मार्गों पर अपने सैनिक नियुक्त करके उनकी रसद के मार्गों को बंद करवा दिया है। अब वहाँ उसके भूखों मरने की नौबत आ जायगी। तभी, हम उस पर आक्रमण करके उसे परास्त करेंगे और उसकी दुर्गति करके उससे गोगूँदा छीन लेंगे।

अमरसिंह : किन्तु दा जी! आप ने उसे रण में मारा क्यों नहीं, उसे जीवित छोड़ क्यों दिया, अन्यथा न रहता बाँस और न बजती बाँसुरी।

प्रताप : यह तुम नहीं समझोगे, वत्स! प्रताप अपने लक्ष्य से कभी चूकता नहीं—अपने भीषण भाले के तीव्र प्रहार से वह एक साथ ही कई-कई वीरों को मार गिराता है। किन्तु···

अमरसिंह : किन्तु क्या दा जी! आप कहते-कहते रुक क्यों गए?

प्रताप : प्रभु की लीला विचित्र है। वह जो चाहता है, वही होता है; मनुष्य के करने से कुछ नहीं, भले ही वह लाख प्रयत्न क्यों न करे—

नूर ख़ाँ : हाँ, जहाँपनाह!
लाख कोशिश करे इंसान तो क्या होता है?
वही होता है जो मंज़ूरे ख़ुदा होता है।

प्रताप : और फिर—'जाको राखे साइयाँ, मारि सकै ना कोइ।'

भामाशाह : किन्तु, महाराणा! आप कुछ छिपा रहे हैं?

प्रताप : हाँ, भामाशाह ! छिपा तो रहा ही हूँ।

अमरसिंह : क्या दा जी ! आप क्या छिपा रहे हैं ?

प्रताप : यही कि मानसिंह पर प्रहार करते समय मेरा मनोभाव बदल गया; राजपूती रक्त की एकसूत्रता का तार झनझना उठा; आत्मिक शक्ति ने साथ नहीं दिया और मैं मन ही मन यह कामना करने लगा कि भगवान् उसे सद्‌बुद्धि दे, उसकी रक्षा करे और वह बच जाय और मुझे आश्चर्य नहीं हुआ जब मेरा भाला मात्र हाथी के महावत को मार कर निकल गया और मानसिंह तत्काल हौदे में दुबककर बच गया।

अमरसिंह : किन्तु, दा जी ! मानसिंह आप का शत्रु है। उसके विषय में आपके मनोभाव में परिवर्तन क्यों ?

प्रताप : मानसिंह अकबर की कूटनीति का शिकार है। वह उसकी एक पंथ दो काज की नीति के नीचे पिस रहा है क्योंकि वह दिग्भ्रमित है, अपरिपक्व है, बुद्धि और अनुभव का कच्चा किन्तु हृदय का सच्चा उत्साही युवक है, पर दूरदर्शी नहीं। किन्तु अब गड़े गुर्दे उखाड़ने से क्या लाभ ? अब तो जो होना था, वह हो चुका। अब तो हमें उससे प्रतिशोध लेना है।

अमरसिंह : हाँ, दा जी ! प्रतिशोध लेना है हमें महावीर झाला बीदा का, रामसिंह तोमर और उनके पुत्रों का, रामदास और किशनदास का, भीमसिंह डोडिया और शंकरदास राठौड़ का।

भामाशाह : और झाला मानसिंह और सोनगरा मानसिंह का।

ताराचन्द : और हकीम ख़ाँ सूरी और वीरबंड चेतक का।

प्रताप : अप्सराएँ अभिनन्दन कर रही हैं स्वर्ग में उनका; कीर्त्ती परिव्याप्त है चौदहो भुवनों में उनकी; मर कर अमर हो गए हैं वे सदा-सर्वदा के लिए; कभी भूलेंगे नहीं स्वातन्त्र्य-यज्ञ में अपनी आहुति देने वाले वे महाप्राण। प्रतिशोध लेकर उनकी आत्मा को तुष्ट करना है हमें। मेवाड़ जननी के, भारत माता के सच्चे सपूत हैं वे।

अमरसिंह : किन्तु दा जी ! हमने उनके भी तो सहस्रो वीर योद्धाओं को मार गिराया है। न जाने कितने अभागे दूर देश से आकर हल्दीघाटी की रणभूमि में समा गए, सदा-सर्वदा के लिए सो गए।

प्रताप : भुला दो इन बातों को, वत्स ! अब आगे की योजना बनाओ। बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेइ।

नूर ख़ाँ : हाँ, जहाँपनाह ! अब हमें दुश्मन को ऐसा खेल खिलाना है जो वह कभी न खेला हो।

ताज ख़ाँ : ज़िन्दगी भर याद रखे वह जिसे।

ताराचन्द : छठी का दूध याद आ जाये जिसे खेलते हुए, ऐसा खेल।

प्रताप : तो कस लो कमर और तैयारी करो अवसर मिलते ही शत्रु पर आक्रमण की।

भामाशाह : जो आज्ञा, महाराणा !

सब : महाराणा की जय। मातृभूमि की जय। भारत माता की जय। जय-जयकार की समाप्ति के साथ ही वाद्य-संगीत की स्वर-लहरियों पर एक गीत थिरकता है—

हे वीर-भूमि मेवाड़-जननि ! हे भारत माँ स्वातन्त्र्य-जननि !
हे वीर-प्रसविनी मरु धरती ! हे शत्रु-मान-मर्दन-कर्त्री।
हे अद्रि-भवन-मंगल-कर्त्री ! हे क्रूर काल-सम प्रबल धरनि !
तेरा प्रताप जग में छाए। भुव-मंडल मे कीरति पाए।
हो अखिल भुवन का पूज्य पात्र। यह वज्र गात्र सम महापात्र।
यह विकट वीर-भंजक प्रताप। यह शत्रु-मान-गंजक प्रताप।
यह सर्व धर्म समभाव प्रबल। यह अखिल सृष्टि का शूर सबल।
है धन्य धन्य जननी महान। है धन्य वीर की आन-बान।
है धन्य वीर का स्वाभिमान। यह भारत का गौरव महान।
है धन्य धन्य जयवन्ति जननि ! हे वीर-भूमि मेवाड़-जननि !

[गीत समाप्त होते ही एक सुरम्य इन्द्रधनुषी प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

द्वितीय दृश्य

स्थान : गोगूँदा का राज-दरबार

समय : सायंकाल

[महाराणा प्रताप राजसिंहासन पर विराजमान हैं। सिर पर छत्र शोभायमान है। सेवक चँवर डुला रहे हैं। सामन्त, योद्धा और दरबारी अपने-अपने स्थान पर विराजमान हैं। सुन्दरियाँ वाद्य-संगीत की ध्वनि पर महाराणा प्रताप की आरती उतारते हुए गाती हैं :]

हे भासमान भास्कर प्रचण्ड !
हे स्वाभिमान के मार्त्तण्ड !
हे विकट वीर-भंजक प्रताप !
हे शत्रु-मान-गंजक प्रताप !
अरि-मर्दक जन-रंजक प्रताप !
तुम क्रूर काल-सम अति प्रचण्ड।
हे जग-जीवन-रक्षक प्रताप !
हे भरत-भूमि-रक्षक प्रताप !
हे शरणागत-वत्सल प्रताप !
हे भरतखण्ड-भैरव प्रचण्ड !
हे सर्वधर्म समभाव प्रबल !
हे अखिल सृष्टि के शूर सबल !
न्योछावर तुम पर अखिल प्रकृति।
न्योछावर तुम पर निखिल सृष्टि।
न्योछावर तुम पर सर्व-जननि।
न्योछावर तुम पर निखिल भुवन।
हे भासमान भास्कर प्रचण्ड !
हे स्वाभिमान के मार्त्तण्ड !

[आरती समाप्त करके सुन्दरियाँ जाती हैं। चतुर्दिक् हर्षोल्लास का वातावरण है। तभी प्रताप सब को सम्बोधित करके कहते हैं]

प्रताप : स्वातन्त्र्य सेनानी महावीरो ! गोगूँदा दुर्ग में बन्द आतंकित शाही सेना पर आक्रमण करके हमने उसकी जो दुर्दशा की, वह आजीवन उसे कभी भूलेगी नहीं। नगर के

चारों ओर गहरी-गहरी खाइयाँ खोदकर, सार्वजनिक मार्गों पर सुरक्षा के लिए ऊँची-ऊँची दीवारें खड़ी करके, वह अपनी संरक्षा की कल्पना करती रही, किन्तु परिणाम बड़ा भयावह निकला। न जाने कितने सैनिक रसद के अभाववश भूखों मरे; न जाने कितने महामारियों के शिकार हो काल के गाल में समा गए; न जाने कितने हमारे आक्रमण के समय मारे गए और न जाने कितने लँगड़े-लूले और पंगु हो गए। मानसिंह और आसफ़ ख़ाँ बच तो गए, किन्तु अकबर ने आक्रोश-वश कई महीनों के लिए उनकी ड्योढ़ी बंद कर दी।

नूर ख़ाँ : हाँ, जहाँपनाह ! बड़ी ख़स्ता हालत हो गई बेचारों की।

गड़बड़सिंह : हाँ, महाराणा ! बेचारे अब यह कहते हुए रो रहे हैं
बड़े बे आबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले।
[गड़बड़सिंह की बात सुनकर सब ठहाका मार कर हँसते हैं।]

भामाशाह : मेवाड़ से समस्त मुग़ल सैनिकों का सफ़ाया कर दिया गया है। अब वे आँख उठा कर भी इधर नहीं देख सकते। मानसिंह तो इधर आने का अब साहस नहीं कर सकता। हाँ, उसका आका अकबर भले ही अपनी सेना को, मौत के मुँह में झोंकने के लिए, यहाँ बरबस लाने का दुस्साहस करे।

प्रताप : दुस्साहस करेगा तो मुँह की खाएगा। अभी तक हमने उसे शह दी, अब मात देंगे।

गड़बड़सिंह : हाँ, महाराणा ! अब हम उसकी सारी हेकड़ी भुला देंगे।

नूर ख़ाँ : हाँ, जहाँपनाह ! इन्तक़ाम का मौक़ा मिला तो हम जान हथेली पर रख कर इन्तक़ाम लेंगे। उसकी यहीं क़ब्र ख़ना कर उसे दफ़ना देंगे।

गड़बड़सिंह : हा, मेरे मित्र ! तुम चिन्ता न करो। मैं गड़बड़सिंह अपने सिर की शपथ लेकर कहता हूँ कि मैं तुम्हें वाजिब काम में हर सम्भव सहयोग दूँगा।

प्रताप : गड़बड़सिंह ! परिहास का समय नहीं है यह।

गड़बड़सिंह : हाँ, जहाँपनाह ! अभी नहीं, आगे आने वाला है।

भामाशाह : गड़बड़सिंह ! स्थिति की गम्भीरता को समझने का प्रयत्न करो। हास्य-परिहास में व्यर्थ समय नष्ट करना उचित नहीं।

गड़बड़सिंह : प्रयत्न तो करता हूँ पर लगता है कि विधाता मुझे गम्भीरता का घोल पिलाते समय सठिया गया, क्योंकि ज्यों ही मैं अपनी तथाकथित सद्‌बुद्धि पर बल देकर, गम्भीरता की चिड़िया को पकड़ने का प्रयत्न करता हूँ, त्यों ही वह फुर्र से उड़ जाती है।

प्रताप : अच्छा, गड़बड़सिंह ! चुप रहो।

गड़बड़सिंह : जो आज्ञा, स्वामी ! सब बोलें, सब बोलें, सब बोलें; "मैं तो भय्या टुप्पै टाप।"

[सब ठहाका मार कर हँस पड़ते हैं।]

परदा गिरता है।

तृतीय दृश्य

स्थान : शेरपुर

समय : सायंकाल

[अब्दुल रहीम ख़ानख़ाना का शिविर]

अ. ख़ानख़ाना : यह क्या? चारों ओर एक अजीब उदासी, अजीब वीरानी, अजीब माहौल, अजीब परिवेश! कहीं किसी ख़ुशी का इज़हार नहीं, मानो सारा खेमा सिर से पैर तक किसी बड़ी भारी ग़मगीनी के समन्दर में डूबा हो। कहीं कोई आवाज़ नहीं मानो सब सहमे-सहमे-से बैठे हों।

मीर ज़ामिन : हाँ, हुज़ूर! बड़ा ताज्जुब है। लगता है कि प्रकृति भी आठ-आठ आँसू रो रही है मानो कोई बहुत बड़ी घटना या दुर्घटना हो गई हो। शिविर में कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति दिखाई नहीं देता। जो लोग हैं भी, उनके मुँह पर मुर्दनी-सी छाई हुई है। लगता है जैसे कुछ कहना चाहते हों पर कहने का साहस न हो। जो भी देखता है, सिर झुका कर खड़ा हो जाता है, मानो वह कोई बहुत बड़ा गुनाह कर बैठा हो।

अ. ख़ानख़ाना : हाँ, ज़ामिन! मुझे तो किसी बुरे वक्त का साया नज़र आता है।

मीर ज़ामिन : हाँ, हुज़ूर! मुझे भी कुछ ऐसा ही लगता है।

अ. ख़ानख़ाना : तभी तो चारों ओर सन्नाटे और ख़ामोशी के सिवा कुछ नहीं। पहरेदारों को देखकर लगता है, मानो उन्होंने अपने ओठ सिल रखे हों, अथवा मानो कोई दहशतगर्द उन्हें सिल गया हो।

मीर ज़ामिन : एक लफ़्ज़ भी तो किसी के मुँह से नहीं निकला।

अ. ख़ानख़ाना : (अपनी ख़ास बेग़म के जनानख़ाने में प्रवेश करते हुए) बाँदी! रोशनी! बेग़म! कहाँ हो तुम लोग? ज़ोहरा! सुल्ताना! कोई जवाब नहीं। क्या सब मर गईं?

मीर ज़ामिन : हुज़ूर! ऐसी मनहूस बात मत कहिए। मेरा तो दिल बैठा जाता है।

सल्मा : (प्रवेश करके) ग़ज़ब हो गया हुज़ूर। आपके दुश्मनों की आ बनी। क़हर ढा दिया उन्होंने हमारे खेमों पर।

अ. ख़ानख़ाना : क्या हुआ? क्या किया दुश्मनों ने? कैसे घुस आए वे बदबख़्त जनानख़ाने में? कहाँ मर गए थे पहरेदार? कहाँ गई थी सुरक्षा-सैनिकों की टुकड़ी? निकम्मे, नामर्द, नपुंसक, बेहया, हरामख़ोर। ज़रा भी फ़र्ज़ का अहसास नहीं।

सल्मा : (डरती-काँपती हुई सहमे-सहमे-से स्वर में) पहरेदारों की क्या चलती हुज़ूर! ख़ास कर ऐसी स्थिति में जब सुरक्षा-सैनिकों में से भी अनेक मारे गए, अनेक ने सिर्फ कुछ घण्टों में ही दम तोड़ दिया, अनेक बंदी बना लिए गए और न जाने कितने जान बचा कर भाग गए।

अ. ख़ानख़ाना : क्यों? क्या पहरेदारों ने अपनी माँ का दूध नहीं पिया? क्या वे सब हरामख़ोर और नामर्द हैं?

सल्मा : नहीं, हुज़ूर! मेरा यह मतलब नहीं।

अ. ख़ानख़ाना : तो फिर और क्या? क्या मतलब है तुम्हारा?

सल्मा : माफ़ कीजिए, हुज़ूर! कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगू तेली? कहाँ शेर, कहाँ गीदड़? कहाँ महाराजकुमार अमरसिंह और उनके अनन्य वीर योद्धा और कहाँ बेचारे ग़रीब पहरेदार?

अ. ख़ानख़ाना : तो क्या मर भी नहीं सकते थे वे हरामख़ोर?

सल्मा : मरने की नौबत ही कहाँ आई, हुज़ूर!

अ. ख़ानख़ाना : तो फिर कहाँ हैं बेगम ख़ास और दूसरी बेगमें और कहाँ हैं सारी शहज़ादियाँ?

सल्मा : क़हर बरपा हो गया दो लमहों में, हुज़ूर! पलक झपकते ही कुछ का कुछ हो गया।

अ. ख़ानख़ाना : क्या मतलब? क्या कहना चाहती हो तुम?

सल्मा : जान बख़्शें, हुज़ूर! इस बाँदी की।

अ. ख़ानख़ाना : हाँ, हाँ; बे-ख़ौफ़ कहो।

सल्मा : कयामत देखकर मैं बेहोश हो गई। होश आया तो सारा जनानख़ाना वीरान मिला। महाराजकुमार अमरसिंह सारी बेग़मों और शहज़ादियों को क़ैद करके ले गए।

अ. ख़ानख़ाना : और तुम?

सल्मा : मुझे अफ़सोस है, हुज़ूर! कि मैं मर क्यों न गई? मैं गुनहगार हूँ। मुझे सज़ा दीजिए।

अ. ख़ानख़ाना : (आक्रोशपूर्ण तीव्र स्वर में) कहाँ हैं जनानख़ाने के हरामख़ोर पहरेदार?

पहरेदार : (सभी तीव्र गति से आकर हाथ जोड़ कर एक स्वर में) हुजूर ! हम ख़तावार हैं, गुनहगार हैं। हमें सज़ा दीजिए।

अ. ख़ानख़ाना: हाँ, हाँ, तुम सब नमक-हराम हो, गुनहगार हो। तुम्हें कड़ी से कड़ी सज़ा दूँगा। तुम्हारी खाल खींच कर उसमें भूसा भरवा देना भी तुम्हारे साथ रियायत होगी।

[पहरेदार सिर नीचा कर लेते हैं। ख़ानख़ाना क्रोध से लाल-पीले होते हैं। तभी, एक पहरेदार बड़ी तीव्र गति से आता है।]

पहरेदार : (द्रुत गति से प्रवेश करके आदाब बजाते हुए) खुशख़बरी है, हुजूर !

अ. ख़ानख़ाना : क्या खुशख़बरी है? शीघ्र कहो।

पहरेदार : महाराजकुमार अमरसिंह हमारी आक़ाओं और शहज़ादियों को बाइज़्ज़त वापस लेकर आ रहे हैं। चारों ओर खुशी का माहौल है।

अ. ख़ानख़ाना : या खुदा ! तेरा लाख-लाख शुक्र, तेरी हज़ार-हज़ार मेहरबानी। तेरे रहमो-करम की कोई इन्तहा नहीं, कोई सीमा नहीं। (घुटने टेक कर दोनों हथेलियों को ऊपर करते हुए) या मेरे मालिक ! मेरे मौला ! ! मेरे पाक परवरदिगार ! ! ! मेरे पास अल्फ़ाज़ नहीं तेरा शुक्रिया अदा करने के लिए। तेरी बन्दा-नवाज़ी बेमिसाल है; तेरी बन्दा-परस्ती हैरत-अंगेज़ है।

अमरसिंह : क्षमा कीजिए, ख़ानख़ाना साहब ! मेरे कारण आपको कष्ट पहुँचा। बेग़मों और शहज़ादियों को उनकी बाँदियों सहित सादर सुरक्षित खेमे में पहुँचा दिया है।

अ. ख़ानख़ाना : (अमरसिंह को अपनी भुजाओं में भरकर गले लगाते हुए) नहीं, मैं आपको कभी माफ़ नहीं कर सकता।

अमरसिंह : ठीक ही है। मैंने अपराध ही ऐसा किया है।

अ. ख़ानख़ाना : हाँ, मैं आप को अपने प्रेम के बंधन में बाँधकर ऐसी सज़ा दूँगा कि आप उससे कभी छूटेंगे नहीं।

[दोनों ठहाका मारकर हँस पड़ते हैं।]

अमरसिंह : अच्छा, तो अब आज्ञा दीजिए।

अ. ख़ानख़ाना : जैसी आप की इच्छा। महाराणा को मेरा शतशः धन्यवाद और आदाब।

[अमरसिंह जाते हैं। बेग़में और शहज़ादियाँ बाँदियों के साथ आती हैं।]

बेग़म ख़ास : इतना उदार दिल इंसान मैंने आज तक कभी देखा नही। महाराणा की दरियादिली, नेक-दिली और इंसानियत की कोई मिसाल नहीं। हमें देखते ही अपने बेटे अमरसिंह को ताकीद करते हुए बोले—

"मेरी हमशीराओ और बच्चियो !
आपको कष्ट पहुँचा, इसका हमें रंज है। मेरा बेटा कसूरवार है, इसलिए मैं लज्जित हूँ। आप मेरी माँ-बहनों के समान हैं। आपका अपमान मेरा स्वयं का अपमान है। क्षमा चाहता हूँ आपके इस कष्ट के लिए। आप लोग कुछ देर विश्राम करें। अब आपको कोई कष्ट न होगा। भोजनादि के उपरान्त मेरा पुत्र स्वयं आप सबको स-सम्मान आपके शिविर पहुँचा देगा।"

उसके बाद हम सब का जिस तरह सत्कार किया गया, हमारे साथ जैसा सलूक किया गया, वह मैं बयान नहीं कर सकती। महाराणा सच्चा स्वाभिमानी राजपूत ही नहीं, ऐसा हमदर्द फ़रिश्ता है, जिसकी निगाह में हिन्दू-मुसलमानों में कोई भेद-भाव नहीं और जिसका दर्द सारी दुनिया का दर्द है।

अ. ख़ानख़ाना : अच्छा, तो आप पर भी उनका रंग चढ़ गया ?

निगार : यक़ीन कीजिए, अब्बा हुजूर ! आप पर भी उनका रंग चढ़े बिना न रहेगा। शर्त यही है कि एक बार आप से उनकी भेंट हो जाय।

अ. ख़ानख़ाना: अच्छा, तो मेरी बेटी भी उस महान् इंसान की इंसानियत से इतनी प्रभावित है। (स्वगत) शुक्र है पाक परवरदिगार का कि उसने हमें सद्‌बुद्धि दे दी। ऐसे महान् इंसान से दुश्मनी ? नहीं, किसी कीमत पर भी नहीं। बादशाह अकबर की भी मैं इस विषम में परवाह नहीं करता। और यदि करूँ भी तो उससे क्या होता है ?

निगार लाख कोशिश करे इंसान तो क्या होता है ?
वही होता है जो मंज़ूरे खुदा होता है।

सुल्ताना : तो अब हमें अपने घर वापस चलना होगा, अब्बा हुजूर !

अ. ख़ानख़ाना: हाँ, हाँ, बिल्कुल। यहाँ रुकने की अब को ज़रूरत नहीं। ऐसे इंसान से दुश्मनी मोल लेना सारे जहाँ के सरताज पाक परवरदिगार की ख़िलाफ़त करना है। मैं तो उसके सामने अपना सिर झुका कर माफ़ी माँगने में भी कोई संकोच नहीं करता है। धन्य है वह महाराणा प्रताप महान्, मेरा उसे लाखों प्रणाम।

[सब आश्चर्य-स्तब्ध होकर इधर-उधर देखते हैं। बेग़मों और बेटियों में प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है। संगीत-वाद्य की तान पर नर्तकियों के पैर थिरकने लगते है।]

परदा गिरता है।

चतुर्थ दृश्य

स्थान : मेवाड़ का एक पर्वतीय दुर्ग

समय : पूर्वाह्न

[महाराणा प्रताप एक पहाड़ी दुर्ग में अपने सामन्तों के साथ बड़ी गम्भीर चिन्तनशील मुद्रा में बैठे हैं। तभी, उनके राज्य का कोषाध्यक्ष एवं सामन्त भामाशाह वहाँ पहुँचता है।]

प्रतिहार : महाराणा की जय हो। कोषाध्यक्ष-सामन्त भामाशाह जी पधारे हैं।

प्रताप : उन्हें तुरन्त भेजो। (प्रतिहार सादर प्रणाम करके जाता है।)

भामाशाह : (प्रवेश करके) महाराणा की जय हो।

प्रताप : विराजिए भामाशाह! स्वागत है आपका।

भामाशाह : धन्यवाद महाराणा! आप की कृपा ही मेरे जीवन का सम्बल है। आपकी छत्र-छाया में ही हम सब का अस्तित्व एवं स्वाभिमान सुरक्षित है। आप में इस देश की आत्मा का अधिवास है। इसलिए···

प्रताप : इसलिए क्या भामाशाह?

भामाशाह : इसलिए मेरे साथ मेरा सर्वस्व आप को समर्पित है। मेरा जीवन तो आप को समर्पित था ही, मेरी समस्त अर्जित-उपार्जित सम्पत्ति भी, मेरे पूर्वजो द्वारा रक्षित, अर्जित-उपार्जित एवं प्रवर्द्धित सम्पत्ति के साथ, आपको समर्पित है।

प्रताप : नहीं, भामाशाह! इस की आवश्यकता नहीं। मैं अपने बाहु-बल से अर्जित सम्पत्ति द्वारा ही इस देश और इसके स्वाभिमान की रक्षा करूँगा। मेरा जीवन और मेरे प्राण इस देश को समर्पित हैं। उनके रहते मुझे तुम्हारी सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं।

भामाशाह : (करबद्ध होकर विनत भाव से) नहीं, महाराणा! आवश्यकता है, आवश्यकता ही नहीं, प्रभूत आवश्यकता। देश-आक्रान्ताओं के अत्याचार से पीड़ित है। भारतमाता की आत्मा आहत है। राजपूतों का स्वाभिमान बंदी है। आक्रान्ताओं के लोभ की सीमा नहीं। उनकी अहमन्यता निरन्तर बढ़ती जा रही है। उन्हें पराजय का पाठ पढ़ाना परमावश्यक है, और इसमें विलम्ब अनपेक्षित है। आवश्यकता है देश पर मर-मिटने वाले स्वाभिमानी सैनिकों की विशाल वाहिनी की।

प्रताप : देश की रक्षा, आक्रान्ताओं पर विजय और उनके संहार एवं निष्कासन के लिए मैं कृतसंकल्प हूँ, मेरा जीवन और मेरे प्राण देश पर न्योछावर हैं।

भामाशाह : (करबद्ध होकर विनत भाव से) किन्तु महाराणा! यह सब अविलम्ब होना चाहिए।

प्रताप : इसमें असहमति का कोई कारण नहीं।

भामाशाह : तो फिर इसके लिए आवश्यकता है सैन्य-संग्रह और उसके भरण-पोषण एवं संरक्षण हेतु वांछित धन-राशि की।

प्रताप : हाँ, इसमें भी असहमति का कोई कारण नहीं, कोई संदेह नहीं।

भामाशाह : तो फिर सहमत हैं आप मेरी बात से महाराणा!

प्रताप : हाँ, भामाशाह! बिल्कुल सहमत हूँ।

भामाशाह : तो फिर स्वीकार कीजिए मेरे पास रक्षित कोष की समग्र धनराशि, देश की रक्षा के लिए, मेरी एक तुच्छ भेंट के रूप में और अपना लीजिए मुझे महाराणा! अपने एक अकिंचन दास के रूप में।

प्रताप : तुम तो अपने ही हो भामाशाह! मेरे अभिन्न अंग। तुम्हें भिन्न कौन कहता है?

भामाशाह : (हाथ से ताली बजा कर संकेत करता है। अनुचर हीरे, जवाहरात, मुक्ताओं और स्वर्ण-मुद्राओं से सजे थाल भेंट के लिए प्रस्तुत करते हैं।) तो फिर अपना लें मुझे, मेरे अनुचरों और मेरी इस भेंट के साथ जो वस्तुतः आप ही की है। मैं तो इसकी रक्षा का एक निमित्त मात्र हूँ।

प्रताप : (भामाशाह को गले लगाते हुए) धन्य हो भामाशाह! तुम ने तो मुझे निरुत्तर कर दिया।

भामाशाह : महामहिम! मेरा शरीर, जीवन और यह कोष सब कुछ आपका अपना ही है। आप मुझे अपने से भिन्न न समझें। मेरे पास जो कुछ है, आप और आपके पूर्वजों का ही दिया हुआ है।

अन्य सामन्त : (सब एक साथ) हाँ, स्वामी! हमारी भी एक स्वर से यही प्रार्थना है कि आप हमें और हमारे स्वत्वाधिकारों को अपना ही समझें, अपने से भिन्न अथवा पृथक् नहीं। आपके एक-एक बूँद रक्त की रक्षा के लिए, हम अपने प्राणों की बाज़ी लगा देंगे। हमारा तन-मन और धन सब कुछ आपको समर्पित है, आप पर न्योछावर है।

कुलगुरु : (प्रवेश करते हुए) तथास्तु, तथास्तु, तथास्तु।

[सब उठकर कुलगुरु को प्रणाम करते हैं। कुलगुरु हाथ उठा कर सब को 'विजयी भव' कह कर विजयी होने का आशीर्वाद देते हैं।]

प्रताप : गुरुवर! इस विशिष्ट स्थिति में अचानक आपका आगमन बड़ा मांगलिक एवं शुभ संकतेदायी है और आपका आशीर्वाद उसका पुष्टिकर्ता।

कुलगुरु : तो फिर मंगल-कार्य में विलम्ब क्यों? शुभस्य शीघ्रम्।

प्रताप : हाँ, गुरुवर! आपके आदेश की प्रतीक्षा थी, वह मिल गया। अब हमें और क्या चाहिए? हम सब मातृभूमि की रक्षा के लिए मर मिटने को तत्पर हैं। आपकी प्रेरणा मेरा सम्बल है, आपका मंगल-आशीष हमारी विजय। अब हमारे विजय-अभियान में कोई विलम्ब नहीं।

कुलगुरु : ऐसा ही हो, ऐसा ही हो, ऐसा ही हो। [कुलगुरु का प्रस्थान।]

प्रताप : साथियो! आप सब से कुछ भी छिपा नहीं है। नानी के आगे ननिहाल की बातों की आवश्यकता नहीं। आप सब मेरे अविभाज्य अंग हैं। देश की स्वतन्त्रता एवं स्वाभिमान को हमारी शक्ति की, हमारे शौर्य-साहस एवं बलिदान की आवश्यकता है। उसकी एक-एक इंच भूमि की मुक्ति के लिए, उसके एक-एक अणु-परमाणु के स्वातन्त्र्य के लिए, हमारे विजय-अभियान की अपेक्षा है। उसके लिए जब हम सभी कृत-संकल्प हो मर मिटने के लिए तत्पर होंगे, तभी हमारा विजय-अभियान सफल होगा, तभी हमारा प्रयत्न सार्थक और तभी उसके तत्त्वों और यौगिकों के—क्षिति, जल, पावक, गगन एवं समीर के, एक-एक अणु-परमाणु में तुम्हारा नाम अंकित होगा। स्वातन्त्र्य यज्ञ की इस बलि-वेदी पर अपना तन-मन और धन सब कुछ न्योछावर कर दो; उसके परम पावन यज्ञ-कुण्ड में अपना सब कुछ होम दो; यही समय की आवश्यकता है और इसी में हमारे संकल्प की परीक्षा और पूर्णता।

सब : महाराणा की जय! मेवाड़ की जय। वीर-भूमि की जय। भारत माता की जय।

[तभी नेपथ्य से युद्ध-वाद्यों के साथ युद्ध-गान की ध्वनि आती है।]
स्वतन्त्रता महान् है।
महान् स्वाभिमान है।
महान् वीर-भूमि का,
महान् मुक्तिदान है।

प्रचण्ड काल-केसरी,
पुकारता अराति को।
है क्रुद्ध दृष्टि ईश्वरी
प्रचारती अनीति को।
पुकारती हमें यही,
प्रचारती हमें यही।
ये बोध-मोद-दायिनी,
महान् स्वर्ग-शायिनी।
मरो-कटो, जियो-मरो,
जियो तो मात्र इसलिए।
कि मान मातृभूमि का
रहे ये शक्ति इसलिए।

सब

महाराणा की जय।
स्वाभिमान की जय।
मेवाड़ की जय।
भारत माता की जय।

[जयजयकार की ध्वनि और एक बहुरंगी प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

पंचम दृश्य

स्थान : मेवाड़ के एक दुर्ग का विशाल मैदान

समय : प्रातःकाल

प्रताप : विदेशी आततायी आक्रान्ताओं से पादाक्रान्त मातृभूमि की पीड़ा से पीड़ित-द्रवित वीरो ! जननी जन्मभूमि को दासता की शृंखलाओं से मुक्त करने के लिए कटिबद्ध साहसी शूरो ! पावन भारतभूमि की स्वतन्त्रता के उच्चावेग से उच्छ्वसित-तरलित धीरो ! प्रमाण हैं मेवाड़ की महती परम्पराएँ, प्रमाण है मेवाड़ का शौर्य और पराक्रम और प्रमाण है इसका ज्वलन्त इतिहास कि हमारे संकल्प अडिग हैं। हमने जो भी ठाना, कर दिखाया। हमारे शरीर में रक्त नहीं, पिघला फ़ौलाद प्रवहमान है; हमारे विचार मन्दाकिनी के समान पावन हैं; हमारी देश-भक्ति की उपमा नहीं। हम अपने देश और मानवता के लिए एक क्या, सहस्रों-लाखों बार मर सकते हैं। शरीर-सुख और ऐश्वर्य-वैभव की हमें चाह नहीं, मात्र स्वाभिमान पर हम मरते और जीते हैं। स्वाभिमान ही हमारा नारा है, स्वाभिमान ही हमारा सर्वस्व। उसे छोड़ कर किसी स्थिति में भी हमें संतोष नहीं, उसे त्याग कर स्वर्ग की भी हमें चाह नहीं।

भामाशाह : हाँ, महाराणा ! हम सब आपसे सहमत हैं। जननी जन्मभूमि की रक्षा एवं सेवा में समर्पित आप का जीवन वह प्रकाश-स्तम्भ है, जो मात्र वर्तमान में ही नहीं, युग-युगों तक समस्त संसार के स्वतन्त्रता-सेनानियों का पथ-प्रदर्शन करता रहेगा। देवाधिदेव महादेव के अंशावतार हे स्वामी ! आप के संकेत मात्र पर हम अपने प्राण न्योछावर करने के लिए तत्पर हैं। सिसोदिया, राठौड़, चौहान, तोमर, सोलंकी आदि राजपूत वंशों के जत्थे ही नहीं; ब्राह्मण, वैश्य, भील और शूद्र सभी आपके साथ जननी जन्मभूमि के लिए मर मिटने को सन्नद्ध हैं। यही नहीं, हमारे मुसलिम भाई भी मातृभूमि की रक्षा के लिए हमारे साथ-साथ तत्पर हैं।

ताज ख़ाँ : हाँ, महाराणा ! हम नाचीज़ भी मादरे वतन की रक्षा के लिए सदा आपके साथ रहे हैं और रहेंगे, आपके पसीने की जगह अपना खून बहाएँगे। हमारे सभी जाँबाज़ साथी आपके लिए अपने सिर पर कफ़न बाँधे खड़े हैं। खुदा पाक की क़सम जहाँपनाह ! हम अपने वतन की चप्पा-चप्पा ज़मीन वापस ले कर रहेंगे। अपने वतन पर हम सब की जाँ निसार है।

प्रताप हाँ, ताज ख़ाँ ! तुम तो मेरा दायाँ हाथ हो। तुम ने सदैव मेरा साथ दिया, मेरा उत्साह-वर्द्धन किया, कंधे से कंधा भिड़ाकर शत्रु से सघर्ष किया और आज भी जननी जन्मभूमि की रक्षा के लिए हमारे साथ हो; मेवाड़ की स्वतन्त्रता के लिए मर मिटने के लिए तत्पर हो। तुम्हारे जैसे साथियों पर मुझे गर्व है। मेवाड़ के लिए हिन्दू-मुसलमानों में कोई भेद नहीं। वस्तुत:, हिन्दू और मुसलमान उसकी दो आँखें हैं। किन्तु हमें यह सह्य नहीं कि कोई बाहरी शक्ति मेवाड़ की ओर आँख उठाए, इस पर अपना प्रभुत्व जमाए और हमारी स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप करे। हमारे जीते जी यह सब नहीं हो सकता। वैसे यह सब एक कूटनीतिक क्रीड़ा थी।

ताराचन्द : मैं कुछ समझा नहीं महामहिम ! आप की कूटनीतिक क्रीड़ा का आशय क्या है ?

प्रताप : यही कि पहले उन्हें अवसर दो आने का, जमने का प्रयत्न करने का और जब उन्हें गर्व होने लगे इस बात का कि वे विजयी हैं, वीर हैं, पराक्रमी शूर-साहसी हैं, प्रशासक राजनीतिज्ञ हैं और उनका शासन अटल-अडिग है तब सिर पर कफ़न बाँध कर, उन पर आक्रमण करके उनके छक्के छुड़ा दो, उन्हें धूल चटा दो और उन्हें मौत की नींद सुला दो। उनकी कब्र बना दो यहीं इसी भूमि में।

अमरसिंह : हाँ, दा जी ! उसमें हिन्दू-मुसलमान में कोई भेद नहीं, क्योंकि वह केवल आक्रान्ता है, वहशी और अत्याचारी है। उसने जननी जन्मभूमि पर ज़ुल्म ढाए, इसलिए उसका दण्ड मृत्यु है, केवल मृत्यु और कुछ नहीं।

प्रताप : हाँ, वत्स ! उस पर दया की कोई आवश्यकता नहीं। उसे बताना है कि परिणाम क्या होता है शेर की माँद में घुसने का। वह उसमें से जीवित नहीं निकल सकता, निकलेगा भी तो अंग-भंग के बिना नहीं। और तब उसका जीवन व्यर्थ होगा। उसका कोई उपयोग नहीं—उसका जीना-न जीना बराबर है, एक-सा है।

भामाशाह : न भी हो तो भी उससे कोई ख़तरा नहीं। फिर वह शेर की माँद में घुसने का साहस कभी नहीं कर सकता।

ताज ख़ाँ : और यदि करे भी तो हम उसे कच्चा खा जाएँगे। हमारे लिए सब कुछ जायज़ है, उचित है। हमने कोई गुनाह नहीं किया, किसी पर आक्रमण नहीं किया, किसी की आज़ादी पर हमला नहीं किया। हम अपने मादरे वतन की हिफ़ाजत ही तो कर रहे हैं।

अमरसिंह : हाँ, अब समय आ गया है आततायी आक्रान्ताओं को पाठ पढ़ाने का। शपथ भगवान् एकलिंग के चरणों की, हम उन्हें ऐसा पाठ पढ़ाएँगे कि मेवाड़ की पावन धरती की ओर वे कभी आँख उठा कर भी न देख सकेंगे।

प्रताप : आँख उठा कर देखेंगे तो हम उनकी आँखें फोड़ देंगे। यों भी हमने उन्हें कहाँ जमने दिया? कहीं भी तो वे स्थायी रूप से टिक न सके। आज जमे, तो कल उनके पैर उखाड़ दिए। कहीं भी, कभी भी तो वे चैन की नींद सो न सके। रात को भी, स्वप्न में भी, वे सदा हमारे भय से काँपते रहे। अवसर पाकर भी, राजधानी गोगूँदा में वे कितने दिन ठहर सके?

भामाशाह : हाँ, महाराणा! तीन महीने में ही उनकी ऐसी दुर्दशा हुई कि उन्हें छठी का दूध याद आ गया। कुछ महामारी के शिकार होकर असमय काल के गाल में समा गए, कुछ आप के आतंक और भय से ग्रसित हो हृदयाघात के शिकार हो कर चल बसे और शेष सब 'कुकुरू कूँ' बोल गए। मात्र कुछ ही दिनों में उनका धैर्य छूट गया। परिणाम यह हुआ कि वे गोगूँदा छोड़कर ऐसे भागे जैसे शेर को देखकर ख़रगोश भागता है।

अमरसिंह : और फिर बादशाह अकबर के पास पहुँचे तो उसका रुख देखकर उनके होश फ़ाख़्ता। उन्होंने कभी कल्पना भी न की होगी, स्वप्न में भी सोचा न होगा कि उनकी वफ़ादारी का यह अंजाम होगा। उसने उनकी ड्योढ़ी बंद करके, डेढ़ महीने के लिए उन्हें दरबार से बहिष्कृत कर दिया।

ताज खाँ : फिर क्या हुआ?

भामाशाह : फिर क्या होता? फ़र्जन्द उपाधिधारी से कुछ करते-धरते न बना। उनकी अक्ल ठिकाने हो गई।

प्रताप : हाँ, चौबेजी गए थे छब्बे बनने, रह गए दुबे।

[सब मुसकराते हैं। किन्तु प्रताप पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वे अपनी पूर्ववत् गम्भीरता से कहते हैं।] मुसकराने का समय अभी नहीं आया। अभी तो हमें अपने सिर पर कफ़न बाँधकर आगे बढ़ना है और शत्रु को मातृभूमि से सदा-सर्वदा के लिए निकाल भगाना है। मेवाड़ आततायियों के अधीन नहीं रह सकता।

भामाशाह : तो फिर आज्ञा हो, महाराणा!

प्रताप : आज्ञा है। आगे बढ़ो और मातृभूमि को मुक्त करो। जय भगवान् एकलिंग की।

सब : महाराणा की जय।

मातृभूमि की जय। मेवाड़ की जय। वीर-भूमि की जय। भारत माता की जय।

[युद्ध-वाद्य बजते हैं। सब 'हर हर महादेव' कहते हुए आगे बढ़ते हैं। हाथी-घोड़ों पर आरूढ़ वीरों के ध्वज लहराते दिखाई देते हैं। बिजली कड़कती है और एक तीव्र प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

षष्ठ दृश्य

स्थान : दिवेर का दर्रा

समय : पूर्वाह्न

[महाराणा प्रताप अपने पुत्र युवराज अमरसिंह, दीवान भामाशाह तथा अन्य वीर सामन्तों एवं योद्धाओं के साथ दिवेर पर ससैन्य आक्रमण करते हैं। दिवेर का थानेदार बादशाह अकबर का काका सुल्तान ख़ाँ और उसका सेनापति बहलोल ख़ाँ ससैन्य उनका प्रतिरोध करते हैं।]

बहलोल ख़ाँ : क्यों व्यर्थ अपनी जान देना चाहते हो? शाहबाज़ ख़ाँ को यहाँ से गए अभी अधिक समय नहीं बीता। वह कभी भी आ सकता है। यही नहीं, बादशाह अकबर भी अपनी सेना लेकर यहाँ आने का बहाना खोज रहा है।

प्रताप : तो फिर बुला ले अपने बादशाह अकबर को। देखता हूँ वह कैसे तुम्हारी रक्षा करता है।

सुल्तान ख़ाँ : बादशाह न आए, तो न सही। उसने हमें जो नियुक्त कर रखा है। पहले हमारी तलवार के जौहर देखिए। एक-एक को खोज-खोज कर न मारूँ, तो मेरा नाम सुल्तान ख़ाँ नहीं।

अमरसिंह : अच्छा, तो बड़े हौसले बुलन्द हैं आपके। दिवेर के थानेदार क्या नियुक्त कर दिए गए, अपने को ख़ुदा समझने लगे। किन्तु याद रखिए : आपके शव को गाड़ने वाला भी कोई नसीब न होगा। चील, कौए और गिद्ध ही उसे नोच-नोच कर खाएँगे।

सुल्तान ख़ाँ : अच्छा। तो फिर मैं ही तुम्हें मज़ा चखाता हूँ अपनी तलवार का। एक ही वार में तुम्हारी लाश धूल चाटती नज़र आएगी।

[यह कहते हुए सुल्तान ख़ाँ अमरसिंह पर अपने खड्ग का वार करता है, किन्तु अमरसिंह उसका वार बचाकर उस पर अपने बर्छे से ऐसा प्रहार करता है कि वह अपने घोड़े सहित धराशायी हो जाता है। उधर बहलोल ख़ाँ प्रताप पर खड्ग-प्रहार करने का प्रयत्न करता है, किन्तु प्रताप अपने खड्ग के एक ही वार से उसे घोड़े सहित यमपुरी भेज देत हैं। तभी उनके सामने उमेद ख़ान, लश्कर ख़ान और शेर ख़ान अपने सैनिकों सहित आ धमकते हैं।]

उमेद ख़ान : कोई कितने ही बड़े तीर क्यों न मार ले, पर उमेद ख़ान कभी उम्मीद नहीं छोड़ता। मेरे सामने आने का मतलब शेर की माँद में घुसना है।

प्रताप : अधिक शेखी बघारने की आवश्यकता नहीं। डींग मारने से पहले अपनी असलियत पहचानो। शेर के आगे गीदड़ की क्या मजाल कि वह टिक सके।

[कहते हुए अपने भीषण भाले से उमेद ख़ान, लश्कर ख़ान और शेर ख़ान तीनों को एक साथ छेद देते हैं। तभी अमरसिंह, भामाशाह, ताज ख़ाँ और उनके साथी सैनिक न जाने कितने सैनिकों को मार गिराते हैं। यह देख कर शाही सेना भाग खड़ी होती है। दिवेर पर प्रताप का अधिकार हो जाता है। यही नहीं, दिवेर में मुग़ल पराभव की सूचना मिलते ही प्रताप की सेना के भय से आस-पास के लगभग डेढ़ दर्जन शाही थानों की सैन्य-टुकड़ियों के सैनिक, अपने-अपने थाने खाली करके भाग जाते हैं। जो बच रहते हैं, प्रताप द्वारा भेजे गए सैन्य दल उनका सफ़ाया कर देते हैं। सर्वत्र प्रताप का अधिकार हो जाता है। तभी गुप्तचर कुम्भलगढ़ से समाचार लाते हैं।]

गुप्तचर : (तीन बार पृथ्वी तक हाथ ले जाकर प्रणाम करके) महाराणा ! स्वामी ! आश्रयदाता ! संसार के अवलम्ब ! जगदाधार ! आज्ञा हो तो कुछ निवेदन करूँ।

प्रताप : हाँ, हाँ, कहो। क्या समाचार लाए हो ?

गुप्तचर : यही कि आप की सेना की विजय की सूचना पाकर, कुम्भलगढ़ के किलेदार ग़ाज़ी ख़ाँ बदख़्शी के हाथ-पाँव फूल गए, होश व हवास गुम हो गए; सैनिकों में अफ़रा-तफ़री मच गई और सब के सब किला छोड़ कर भाग गए। बदख़्शी न जाने कहाँ लुकता-छिपता भागता फिर रहा है; न जाने कहाँ भाग कर शरण लेगा।

प्रताप : तुम चिन्ता मत करो। हम अभी कुम्भलगढ़ के लिए प्रस्थान करते हैं। बदख़्शी के होश व हवास ठीक कर देंगे। कहाँ जायगा वह लुकता-छिपता हुआ। त्रैलोक्य में भी उसे शरण न मिलेगी। तुम जाओ, अपना काम देखो और करणीय करो। उसमें किसी प्रकार का भी प्रमाद न हो।

गुप्तचर : जो आज्ञा। (तीन बार प्रणाम करके जाता है। चतुर्दिक् प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है। सेना में नव्य उत्साह छा जाता है।)

प्रताप : साथियो ! कुम्भलगढ़ के लिए प्रस्थान करो। माँ स्वतन्त्रता तुम्हारे स्वागत के लिए आकुल है; तुम्हारी तपस्या का फल देगी; तुम्हें अपने हृदय से [illegible]गाकर कृतार्थ होगी।

जननी जन्मभूमि को प्रणाम करके तुम्हारा जीवन सफल होगा और तुम सब के साथ ही मेरा जीवन भी धन्य हो जायगा।

सब : महाराणा की जय ! मातृभूमि की जय। एकलिंग की जय। भारत माता की जय।

[जय-जयकार की तुमुल ध्वनि से आकाश गूँज उठता है। युद्ध-वाद्यों और नगाड़ों की ध्वनि से योद्धाओं के मन-मयूर आनन्दातिरेक से नृत्य कर उठते हैं। एक दिव्य प्रकाश में नंदी बैल पर आरूढ़ त्रिशूलधारी भगवान् शंकर और सिंहारूढ़ा महिषासुरमर्दिनी को देखकर सब चमत्कृत होते हैं।]

परदा गिरता है।

सप्तम दृश्य

स्थान : कुम्भलगढ़ दुर्ग

समय : सायं 5 बजे

प्रताप : साथियो ! ग़ाज़ी ख़ाँ बदख़्शी के दिन लद गए। वह अपनी सेना सहित भाग गया। फिर भी, सावधानी अपेक्षित है।

भामाशाह : हाँ, महाराणा ! वह अपनी धूर्त्तता के लिए प्रख्यात है। न जाने कब बादशाह अकबर की चिरौरी करके विशाल शाही सेना लेकर आ धमके।

अमरसिंह : आने दो। देखता हूँ कि वह यहाँ से जीवित कैसे जाता है? वह कितनी ही विशाल सेना क्यों न लाए, यहाँ से उसका जीवित जाना सम्भव नहीं।

ताराचन्द : अब उसमें वह साहस कहाँ कि हमारे रहते कुम्भलगढ़ की ओर आँख उठा कर भी देख सके।

चन्द्रसेन : हाँ, महाराणा ! देखेगा भी तो हम उसकी आँखें फोड़ देंगे। एक बार बच कर अब वह पुनः शेर की गुफ़ा में घुस नहीं सकता।

ताज ख़ाँ : किले में सुरक्षित रहते हुए जो केवल हमारी सेना के आगमन की सूचना पाकर, क़िला छोड़कर दुम दबा कर सेना सहित भाग निकला, उसका पुनराक्रमण तो क्या, पुनरागमन भी मुमकिन नहीं और यदि मुमकिन भी हो तो हम उस मुमकिन को ना-मुमकिन बना देंगे। सेना सहित कुम्भलगढ की तलहटी में ही हम उसे दफ़ना देंगे।

ताराचन्द : हाँ, महाराणा ! मातृभूमि मेवाड़ की धरती पर अब उसके अपवित्र पैर नहीं पड़ सकते और यदि पड़ेंगे भी तो काट दिए जाएँगे।

प्रताप : युद्ध-क्रीड़ा का शौक पूरा हो गया, राजनीति की आँख-मिचौनी का खेल समाप्त। शत्रु की उठक-पटक की अब आवश्यकता नहीं। प्रजा त्रस्त है, जन्मभूमि अभावग्रस्त। युद्धों की अतिशयता ने उसे खोखला कर दिया है; शान्ति-जन्य सम्पन्नता के लिए उसके नेत्र तरस रहे हैं। अतः अब प्रजा-पालन और सुव्यवस्था एवं सुशासन की आवश्यकता है, युद्ध की विभीषिका की नहीं।

अमरसिंह : किन्तु दा जी ! युद्ध हमने स्वयं तो थोपा नहीं। यह तो शत्रु की मदान्धता तथा अधिकार एवं राज्य-लिप्सा का परिणाम था कि मेवाड़ युद्ध की विभीषिका से इतना संत्रस्त रहा। हाँ, यह अवश्य है कि हमने अपना स्वाभिमान किसी भी मूल्य पर बेचा नहीं, और न ही कभी बेचेंगे।

प्रताप : यही तो मैं चाहता हूँ, वत्स ! इसीलिए तो मैंने युद्ध-क्रीड़ा की आँख-मिचौनी खेलने का संकल्प किया। इसीलिए तो हम स्वाभिमान एवं स्वातन्त्र्य पर मर मिटने के लिए कृत-संकल्प हुए। इसीलिए तो हमने उनके महत्त्व की दिव्य आभा देखी; इसीलिए तो हम कृतकार्य हुए अपने ध्येय में; इसलिए तो हम सफल हुए मातृभूमि को मुक्त करके उसकी स्वतन्त्रता का दुन्दुभिनाद करने में, उसके अखंड स्वाभिमान की कीर्ती-पताका फहराने में, क्षत्रियत्व के आत्म-सम्मान की रक्षा करने में और अपने साथियों एवं भावी पीढ़ियों के पथ-प्रदर्शन में।

भामाशाह महाराणा ! मातृभूमि पर संकट आया, राज्य-लोलुप नर-पिशाचों की महत्त्वाकांक्षा के कारण, किन्तु आप अपने संकल्प पर अडिग रहे। परमात्मा ने आपको नूतन शक्ति और स्फूर्ति दी, नव्य उत्साह का शंख फूँका, स्वातन्त्र्य और स्वाभिमान पर मर मिटने की अमर प्रेरणा दी और परिणाम आज सबके सामने है।

[तभी कुछ सैनिक एक स्त्री और कुछ पुरुषों को पकड़ कर लाते हैं।]

प्रताप : क्या बात है सैनिको ? कौन है यह स्त्री ? और कौन है यह व्यक्ति ?

प्रभारी सैनिक : यह मतवाली मालिन है और यह देश-द्रोही देवराज।

प्रताप : क्या अपराध है इनका ? विस्तारपूर्वक बताओ।

प्रभारी सैनिक : यह मतवाली मालिन धन-धान्य के प्रलोभन पड़कर में शत्रु के जाल में फँस गई और इसने अपना ईमान बेच दिया, धर्म बेच दिया। यही नहीं, किले पर पहुँचने का सहज-सुगम मार्ग बतलाने के लिए यह पापिनी मार्ग में एक-एक फूल गिराती गई। देश-द्रोह का इससे घृणित उदाहरण और क्या होगा ?

प्रताप : तो इसके हाथ-पैर बाँधकर, कठघरे में बन्द भूखे व्याघ्र के सामने डाल दो, ताकि वह इसके उत्कोच-पुष्ट रक्त-मांस से अपनी क्षुधा और तृषा की तृप्ति कर सके ठीक वैसे ही जैसे शत्रु के उत्कोच से धन्य-धान्य की अपनी क्षुधा और पिपासा की तृप्ति इसने की।

[मतवाली रोती-गिड़गिड़ाती और क्षमा-क्षमा चिल्लाती है। सब धन्य-धन्य कहते हैं। चारों ओर हर्ष और सन्तोष की लहर उमड़ पड़ती है। दीवान भामाशाह तालियाँ बजाता है। फलतः, तीन भयंकर रूपधारी जल्लाद मतवाली को पकड़कर, हाथ-पैर बाँधकर, बुभुक्षित व्याघ्र के सामने डालने के लिए ले जाते हैं।]

भामाशाह : और देवराज का अपराध?

प्रभारी सैनिक : यह कि इस कृतघ्न देश-द्रोही ने उत्कोच के प्रलोभन में पड़कर शत्रु को दुर्ग का भेद दिया और इसके पेय जल के एकमात्र कुएँ में इतने मरे हुए सर्प डलवाए कि उसका जल दूषित होकर विषैला हो गया। फलतः, जल के अभाव में चतुर्दिक् त्राहि-त्राहि मच गई, और समस्त दुर्ग-वासियों को दुर्ग छोड़कर अन्यत्र शरण लेनी पड़ी। दुर्ग के पतन का कारण यही देशद्रोही है।

प्रताप : तो इसे बन्दीगृह की सर्वाधिक अंधकारमयी कोठरी में, इसके हाथ-पैर बाँधकर, डाल दो और उसे भयंकर विषधरों और बिच्छुओं से ऐसा भर दो कि इसे अपने कृत्य का समुचित दण्ड मिल सके।

[देवराज रोता-गिड़गिड़ाता और क्षमा-क्षमा चिल्लाता है। प्रताप तालियाँ बजाते हैं। जल्लाद देवराज के हाथ-पैर बाँध कर उसे दण्ड देने के लिए ले जाते हैं। सब आश्चर्य और संतोष के साथ देखते हैं। तभी एक दिव्य आलोक के साथ]

परदा गिरता है।

गुप्तचर : जो आज्ञा, शरणदाता ! (विनयावनत हो तीन बार प्रणाम करके जाता है।)

प्रताप : देखा आप लोगों ने। जिन्न की बात सोची नहीं कि जिन्न सामने प्रस्तुत। शहबाज़ गया और दूसरा जिन्न आ गया। माँडलगढ़ की विजय में फिर बाधा।

अमरसिंह : तो आने दो दा जी ! इस बार उसकी ऐसी दुर्गति करेंगे कि बच्चू को छठी का दूध याद आ जायगा। मरते समय तक भी न भूल पाएगा अपनी दुर्दशा को वह।

नूर ख़ाँ : हाँ, जहाँपनाह ! शहंशाह अकबर भी भूल जायगा अपनी ज़िद और अकड़; ता ज़िन्दगी पश्चात्ताप करेगा वह अपनी करनी के लिए; हज़ार-हज़ार कोशिशें करके भी कभी भुला न पाएगा वह अपनी सेना की दुर्दशा।

भामाशाह : हाँ, महाराणा ! हम ऐसी योजना बनाएँगे जिसकी कभी किसी ने कल्पना भी न की हो।

प्रताप : कोई चिन्ता नहीं। निश्चिन्त रहो। प्रताप का जीवन संघर्ष का पर्याय है और यदि संघर्ष न हो तो जीवन और मृत्यु में अन्तर क्या? संघर्ष-रहित जीवन एकरस, नीरस और निरानन्द है।

ताराचन्द : धन्य हैं महाराणा ! ईश्वर करे—आप की कीर्त्ति युग-युगान्तर तक अमर रहे।

सब : महाराणा की जय। मेवाड़ की जय। भारत माता की जय। चामुण्डा माता की जय।

[नेपथ्य में एक दिव्य आलोक के साथ अपने-अपने वाहनों पर आरूढ़ चतुर्भुज भगवान् विष्णु, त्रिशूलधारी शंकर और चतुरानन ब्रह्मा सहित अष्टभुजा दुर्गा और माँ चामुण्डा दिखाई देती हैं। सब आश्चर्याभिभूत एवं श्रद्धावनत हो उन्हें प्रणाम करते हैं। तभी, एक सुरम्य इन्द्रधनुषी प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

नवम दृश्य

स्थान : उदयसागर की पाल

समय : सायंकाल

[मेवाड़-मुक्ति के मंगल-पर्व पर एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया है। महाराणा प्रताप अपने साथी सम्बन्धियों और वीर सामन्तों के साथ यथास्थान विराजमान हैं। वाद्य संगीत की स्वर-लहरियों पर वीर बालाएँ नृत्य-गान-रत हैं :]

प्रणम्य हे, प्रणाम लो।
सुरम्य हे, सलाम लो।
पवित्र मातृभूमि हे, महान् मुक्ति-दान लो।
अनन्त शौर्य-सिन्धु में, अपार शक्ति-दान लो।
महान् धैर्य-दान औ', महान् कष्ट-दान लो।
महान त्याग, सर्वभूति, और प्राण-दान लो।
चिराग़ आत्मा का यह, जले अगर, जले यहाँ।
स्वतन्त्रता के हेतु ही, शरीर यह गले यहाँ।
पवित्रताभिमान, स्वाभिमान ही पले यहाँ।
औ' वीर मातृभूमि का, प्रताप ही पले यहाँ।
प्रणम्य हे प्रणाम लो, सुरम्य हे सलाम लो।
पवित्र मातृभूमि हे, महान् मुक्ति-दान लो।

[नाचती-गाती वीरबालाएँ जाती हैं। सामन्तगण मेवाड़ और भारत माता की जय-जयकार के नारे लगाते हैं। परिवेश में चतुर्दिक् आनन्दोल्लास की लहर दौड़ जाती है।]

प्रताप : साथियो !

हमारा स्वातन्त्र्य संग्राम आज सफल हुआ। अवांछित विजातीय आक्रान्ताओं से हमारा संघर्ष इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। विपक्षी शत्रु उसे कितना ही विकृत क्यों न करें; अपनी अहमन्यता की रक्षा के लिए, उस पर कितनी ही लीपा-पोती क्यों न करें; पर उससे उसकी वास्तविकता छिप नहीं सकती। सत्य कभी दब नहीं सकता। जननी जन्मभूमि की रक्षा के लिए, मातृभूमि मेवाड़ के स्वातन्त्र्य एवं स्वाभिमान के लिए, जिन वीर योद्धाओं ने अपने प्राणों की आहुति दे दी, वे मर कर भी अमर हो गए। मेवाड़ के कण-कण में उनका नाम सदैव अंकित रहेगा। अप्सराएँ स्वर्गलोक में उनका स्वागत-सत्कार करके कृतकृत्य हैं; देवता उनके अभिनन्दन में व्यस्त और

देवबालाएँ उनका वरण करके सफल मनोरथ एवं धन्य। आपने भी अपने कर्त्तव्यपालन के लिए अपने प्राणों की बाज़ी लगा दी, यह सोच कर जन-जीवन एवं प्रकृति में सर्वत्र आनन्दोल्लास का वातावरण है।

गड़बड़सिंह : हाँ, महाराणा ! आज हम आपको इस रूप में धेखकर धन्य हैं। मेवाड़ में आज सर्वत्र संतोष की शीतल सुखद छाया का प्रसार, आनन्द के झरने झरते हैं, हास्य-परिहास के फ़ौवारे छूटते हैं। कहीं कोई विपन्न नहीं, कहीं कोई अवसन्न अथवा खिन्न नहीं, सभी आपके शासन में स्वर्गीय सुख भोगते हैं।

ताराचन्द : आप जैसा शासन कहीं देखा-सुना नहीं। रामराज्य के समान प्रजा सर्वत्र सुखी है। आपके औदार्य एवं सर्वधर्म: समभाव, आपकी नैतिकता एवं चारित्रिक दृढ़ता; आपके देश-प्रेम, स्वाभिमान एवं स्वातन्त्र्य प्रेम का प्रकाश अखिल ब्रह्माण्ड में परिव्याप्त है।

भामाशाह : हाँ, महाराणा ! आपका शत्रु शहंशाह अकबर भी आपकी कूटनीतिक दक्षता, युद्ध-प्रणाली, धर्म-निरपेक्षता, नैतिकता एवं चारित्रिक दृढ़ता, देशभक्ति, स्वतन्त्रता एवं स्वाभिमान-प्रियता और आपके पराक्रम, शौर्य एवं साहस का प्रशंसक है। उसके दरबारी ख़ानख़ाना, पृथ्वीराज, बीरबल एवं टोडरमल आपकी शक्ति, सामर्थ्य, कर्तृत्व, औदार्य एवं धर्मनिरपेक्षता पर विस्मय-विमुग्ध हैं।

प्रताप : अकबर हमारा शत्रु है, इसलिए नहीं कि वह विजातीय अथवा विदेशी है, और न ही इसलिए कि वह इस्लाम धर्मानुयायी है, क्योंकि मानवता एक है; संसार के प्रत्येक व्यक्ति में, हर प्राणी में एक ही विश्वात्मा का अधिवास है; इसलिए न तो जाति-भेद का कोई अर्थ अथवा महत्त्व है और न देश-भेद का। जाति भिन्न है तो क्या? देश भिन्न है तो क्या? रंग-रूप अथवा वेश-भूषा भिन्न है तो क्या? मनुष्य की अन्तरात्मा तो एक-दूसरे से भिन्न नहीं। रक्त का रंग तो सब का एक-सा है। सांसारिक सुख-दु:ख तो सब के लिए एक-से होते हैं। और···

भामाशाह : हाँ, महाराणा ! और क्या? आप कहते-कहते रुक क्यों गए?

प्रताप : रुक इसलिए गया कि सुनते-सुनते किसी को अजीर्ण न हो जाय।

गड़बड़सिंह : आपका आशय क्या है, महाराणा? हम कुछ समझे नहीं।

प्रताप : आशय यह कि अच्छी बातें सुपाच्य नहीं होतीं। लोग ऊँघने लगते हैं, एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देते हैं।

गड़बड़सिंह : पचेंगी नहीं तो हम कोई चूर्ण खा लेंगे। हमारे वैद्यराज किस काम आएँगे?

[गड़बड़सिंह की बात सुनकर सब हँस पड़ते हैं।]

नूरख़ान : हाँ, जहाँपनाह ! और क्या ?

प्रताप : और यह कि धर्म तो पारस्परिक विद्वेष, शत्रुता, वैमनस्य, हिंसा-प्रतिहिंसा अथवा मार-काट का कारण हो ही नहीं सकता।

गड़बड़सिंह : किन्तु, महाराणा ! क्षमा करें तो निवेदन करूँ।

प्रताप : क्या ?

गड़बड़सिंह : यही कि धर्म ही प्रायइन सब का कारण होता है।

प्रताप : होता है, पर होना नहीं चाहिए। धर्म तो सभी पूज्य हैं, वन्दनीय हैं क्योंकि धर्म तो धारण किया जाता है जीवन के प्रमुख उद्देश्यों की पूर्ति के लिए, मानव-मांगल्य के लिए, मानवीय एकता के दुन्दुभिनाद के लिए, 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पाठ पढ़ाने के लिए, मानव-मानव में सद्भाव एवं भ्रातृत्व की प्रतिष्ठा के लिए, अपने-पराए का भेद-भाव भुलाने के लिए। और···

नूर ख़ान : और क्या जहाँपनाह ?

प्रताप : और यह कि अकबर अब विदेशी नहीं रहा। वह इस देश की मिट्टी में जन्मा, पला और पुष्ट होकर बड़ा हुआ; अतः वह भारतीय है, पूर्णतः भारतीय। शर्त केवल यही है कि वह यह मानकर चले और भारतमाता को अपनी मंगलमयी जननी और भारतवासियों को अपना भाई माने। फिर भी···

भामाशाह : फिर भी क्या, महाराणा ?

प्रताप : यही कि वह मेरा शत्रु है, और रहेगा, क्योंकि अपनी महत्त्वाकांक्षा के कारण, वह यह भुला बैठा है कि ईश्वर ने हर व्यक्ति को स्वतन्त्र उत्पन्न किया है। उसकी स्वतन्त्रता का अपहरण कोई नहीं कर सकता। किन्तु अकबर दूसरों की स्वतन्त्रता का अपहर्ता है। दूसरों की स्वतन्त्रता का अपहरण करके, उनके स्वाभिमान को विगलित करना और उन्हें अपनी अधीनता के पाश में जकड़ रखना उसका स्वभाव है, और मैं अपने जीते जी यह नहीं होने दूँगा। यह मेरा संकल्प है, प्रण है। कम-से-कम मेवाड़ तो उसके अधीन कभी नहीं रह सकता। अपनी मातृभूमि को मैं दासता अथवा अधीनता की बेड़ियों में कभी नहीं जकड़ सकता। यह हमारा धर्म है। स्वतन्त्रता, स्वाधीनता और स्वाभिमान की रक्षा करना व्यक्ति का परम कर्त्तव्य है।

गड़बड़सिंह : धन्य हैं स्वाभिमान-मार्त्तण्ड महाराणा ! आप धन्य हैं। यह जननी जन्मभूमि आपको पाकर धन्य है, मातृभूमि मेवाड़ और उसकी प्रकृति आनन्द-गद्‌गद और भारतमाता सफल मनोरथ एवं कृतार्थ। हम सब आपके सम्पर्क-सान्निध्य में रह कर धन्य हो गए। वीर-पुत्र और वीर-बालाएँ आप पर न्योछावर हैं।

सब : महाराणा की जय। मातृ-भूमि की जय। वीरभूमि की जय। भारत माता की जय।

[वीर-बालाओं का प्रवेश और संगीत-वाद्य की स्वर-लहरियों पर नृत्य-गान—]

अमर्त्य वीर-भूमि ये, अशेष शूर-जायिनी।
स्वतन्त्रताऽभिमानिनी, अखण्ड कीर्त्तीदायिनी।
महान् मातृ-भूमि ये, महान् पितृ-भूमि ये।
महान् यज्ञ-कुण्ड ये, महान् है हविष्य ये।
निसार ये अशेष प्राण, और सर्वभूतियाँ।
महान् त्याग और कष्ट, और सर्व सिद्धियाँ।
जिएँ अगर तो मात्र मातृ-भूमि के लिए जिएँ।
मरें अगर तो मातृ-पितृ-भूमि के लिए मरें ! अमर्त्य···

[गीत-वाद्य की समाप्ति के बाद एक भव्य स्वर्णिम प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

दसवाँ दृश्य

स्थान : चावण्ड दुर्ग का राज-दरबार

समय : पूर्वाह्न

[चावण्ड दुर्ग के राजदरबार में महाराणा प्रताप राजसिंहासन पर विराजमान हैं। सेवक चँवर डुला रहे हैं। सामन्त एवं दरबारी यथास्थान बैठे हैं।]

अमरसिंह : आपके आदेशानुसार हमने जगन्नाथ कछवाहे की सेना पर आक्रमण किया। बेचारे की बड़ी दुर्गति हुई। न जाने कितने सैनिक मारे गए और न जाने कितने क्षत-विक्षत हो गए; इतनी विशाल-वाहिनी के होते हुए भी, उससे कुछ करते-धरते न बना। येन-केन-प्रकारेण वह अपने प्राण बचाकर चलता बना। उसकी आधी सेना भी सुरक्षित वापस अपने घर पहुँच जाय, तो ग़नीमत है।

नूर ख़ान : हाँ, जहाँपनाह ! परमात्मा ने ख़ूब इन्तक़ाम का मौक़ा दिया। अपने अब्बा हक़ीम ख़ाँ सूरी की मौत का प्रतिशोध लेकरे मरे अन्दर की दहकती-धधकती आग की ज्वाला शान्त हुई। ख़ुदापाक उनकी आत्मा को शान्ति-संतोष दे।

भामाशाह : हाँ, स्वामी ! चौबे जी आए थे छब्बे बनने, रह गए दुबे। बड़े-बड़े तीस मारखाओं को छठी का दूध याद आ गया; लेने के देने पड़ गए। बेचारे किसी तरह दुम दबा कर भाग निकले। इज़्ज़त-प्रतिष्ठा सब धूल में मिल गई।

प्रताप : यह तो तुम ने बहुत बुरा किया।

भामाशाह : (आश्चर्य से) क्यों, महाराणा ! आप नहीं चाहते थे क्या यह ?

प्रताप : मैं तो चाहता ही था। किन्तु आप से उसे ऐसी आशा न थी। उसकी सारी करनी पर पानी फिर गया। सारा किया-कराया गुड़-गोबर। शह और मात, शह और मात का यह खेल तो उसकी सारी प्रतिष्ठा को धूल में मिला देगा।

भामाशाह : (खिन्न मन से) तो क्या आप मुझे अपने से भिन्न समझते हैं, स्वामी ?

प्रताप : (हँसते हुए) मैं तो नहीं समझता। किन्तु तथाकथित कूटनीतिज्ञ अकल को समन्दर अकबर समझता है। इसीलिए उसने ख़ानख़ाना द्वारा तुम्हें मुझ से पृथक् करवाने का प्रयत्न किया; प्रलोभन के पासे फेंके—जागीर, मनसबदारी और न जाने क्या-क्या देने का प्रयत्न किया। किन्तु तुम ठहरे अक्ल के दुश्मन, तुमने उसका सब कुछ ठुकरा दिया, और न्योछावर कर दिया अपना सर्वस्व इस ज़िद्दी प्रताप के लिए, एक दीवाने की तरह मेवाड़-जननी पर, अपनी मातृभूमि पर, माँ स्वतन्त्रता पर।

[सब आश्चर्य और श्रद्धा से भामाशाह और प्रताप की ओर देखते हैं।]

भामाशाह : किन्तु, महाराणा ! यह तो आप का ही पुण्य प्रभाव है कि मेरे जैसा तुच्छ व्यक्ति भी मातृ-भूमि-प्रेमियों, स्वतन्त्रता-सेनानियों और देश-भक्तों की श्रेणी में आ गया।

प्रताप : नहीं, भामाशाह ! तुम तो अपने जैसे आप हो। तुम्हारी कोई उपमा नहीं। तुम्हारे जैसे साथियों के सहयोग के अभाव में मेरा कोई अस्तित्व-महत्त्व नहीं।

[सब धन्य, धन्य कह उठते हैं।]

भामाशाह : नहीं, स्वामी ! आप मेरी इतनी प्रशंसा न करें, अन्यथा मैं अपनी वास्तविकता को भूलकर आकाश में उड़ने लगूँगा। कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगू तेली? मैं तो आप की चरणरज से भी तुच्छ हूँ।

प्रताप : तो फिर महान् बनो।
त्याग दो प्रत्येक प्रकार का ऐश्वर्य-वैभव।
खाओ पत्तलों पर, सोओ घास-फूस पर।
प्रण करो मेरे साथ ऐसा,
जैसा कभी कोई संसार में न कर सके।

भामाशाह : जो आज्ञा, महाराणा !
अक्षरशपालन करूँगा प्रतिज्ञा यह।

प्रताप : और वत्स अमरसिंह ! तुम भी।
मेरी इस अविचल प्रतिज्ञा का ध्यान रखो।
दृढ़ रहे सदा-सर्वदा ही इस टेक पर।
पूरा मेवाड़ अब स्वतन्त्र है।
गर्वोन्नत मस्तक है इसका।
सुखी है प्रजा भी सब और सर्व-स्वाधीन।
किन्तु एक काँटा खटकता है हृदय में,
और खटकेगा सदा।
जब तक न जीतूँ चित्तौड़गढ़,
सारा ऐश्वर्य और वैभव त्याग,
स्वर्ण-रजत-पात्र त्याग,
खाऊँगा पत्तलों पर,

राजसी बिछौने त्याग,
सोऊँगा घास पर,
मेरी यह प्रतिज्ञा अटल आजीवन-आमरण।

अमरसिंह : हाँ, दा जी ! मेरी भी प्रतिज्ञा यही।
सदा इस पर अटल रहूँगा
जब तक है श्वास इस शरीर में।

सब : हाँ, स्वामी ! हम भी सब साथ हैं,
आपकी प्रतिज्ञा में।
रक्षा करेंगे सदा इसकी,
जीवन पर्यन्त हम।

[नेपथ्य में एक दिव्य आलोक के साथ आकाश से देवता पुष्प-वर्षा करते दिखाई देते हैं। साथ ही त्रिशूलधारिणी भारतमाता, सिंहवाहिनी दुर्गा और माँ स्वतन्त्रता अपना वरद-हस्त उठाकर धन्य-धन्य कहती हुई पास आती दिखाई देती हैं। तभी महारानी अजय दे अपनी पुत्र-वधू और अन्य वीरबालाओं के साथ आकर महाराणा की आरती उतारती हैं और वाद्य-संगीत की स्वर-लहरियों पर यह गीत मुखरित होता है—]

स्वतन्त्रता महान् है, स्वतन्त्र स्वाभिमान है।
स्वतन्त्र वीर-भूमि यह, स्वतन्त्र वीर्यवान है।
स्वतन्त्र हर महापुरुष, स्वतन्त्र हर जवान है।
स्वतन्त्र वीर-केसरी, स्वतन्त्र हर किसान है।
न धृष्टता करे कोई, स्वतन्त्रता हरे कोई।
करेगा गर अनर्थ यह, मरेगा मौत निर्दयी।
ये सत्य की ज़बान है, स्वतन्त्रता की आन है।
स्वतन्त्रता पे मर मिटो, स्वतन्त्रता ही शान है।
स्वतन्त्रता ही कान है, स्वतन्त्रता ही ज्ञान है।
स्वतन्त्रता नहीं जिसे, निरर्थ उसका मान है।
निरर्थ उसकी जान है, निरर्थ आन-बान है।
स्वतन्त्रता महान है, स्वतन्त्र स्वाभिमान है।

[गीत समाप्त होने के साथ ही एक सुरम्य दिव्य प्रकाश के साथ]

परदा गिरता है।

समाप्त